KKR/182/2019-2021
RNI No. HARHIN/2012/49148
www.hamarabhumandal.com

हमारा भूमंडल

वर्ष : 9 अंकः 10 अक्टूबर, 2020
पर्यावरण एवं जन-स्वास्थ्य की मासिक पत्रिका
₹ 100/-

हमारे वायुमंडल में छुपे हैं अनेक रहस्य !

वायु-प्रदूषण और स्मॉग करता है मस्तिष्क को भी प्रभावित

SETHI INTERNATIONAL

(An ISO 9001-2008 Certified Company)

A Govt. of India Recognised Export House

Plot No. 80, Sector-29, Part-2, HUDA, Industrial Area, Panipat-132103 (Haryana) India

Mobile: 98120 31040, 98120 00222, 98120 00062

Email: info@sethiinternational.com, rajivsethi@sethiinternational.com

Website: www.sethiinternational.com

E-mail : hamarabhumandal@gmail.com www.hamarabhumandal.com

हमारा भूमंडल

वर्ष : 9 अंकः 10 अक्टूबर, 2020

◆ **सम्पादकीय परामर्श :**
प्रो. प्रदीप माथुर, पूर्व अध्यक्ष, पत्रकारिता विभाग, भारतीय जनसंचार संस्थान, नई दिल्ली. मोबाइल - 981038757
श्री सुरेन्द्र कुमार, पूर्व निदेशक, केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्ली. मोबाइल - 9868072940, 9810802924

◆ **सम्पादक एवं प्रकाशक :**
जगदीश चन्द्र कौशिक, मोबाइल- **+91-9416036002, 7506008274**

◆ **सज्जा एवं ग्राफिक्स :** हिमांशु शर्मा 92163 24942

◆ **सम्पादकीय कार्यालय :**
30, सेक्टर-13, अर्बन इस्टेट, **कुरुक्षेत्र - 136 118 (हरियाणा)**
मोबाइल -**+91-9416036002, 7506008274**
फैक्स : 01744-222869

◆ **विकास एवं विस्तार :**
श्री तरुण बतरा 1085, सेक्टर-6, अर्बन इस्टेट, **करनाल**,
मोबाइल - 9416202010, 9729870010

◆ **क्षेत्रीय कार्यालय :**

• **चण्डीगढ़ :**
श्री उपकार सिंह — एस.सी.ओ.-46, द्वितीय तल, सेक्टर-20 सी, **चण्डीगढ़ - 160 020**
फोन : 0172-2722014, 3012011
फैक्स : 0172-5070704, मोबाइल - 09814069404

• **जम्मू :**
प्रदुम्न गन्जू — 64, अमर विहार, गोल गुजराल, तालाब तिल्लू, **जम्मू - 180 002**
फोन : 0191-2504366, मोबाइल-09419112339

• **शिमला :**
एच. आनंद. शर्मा — धारव्यु, नजदीक आई.एस.बी.टी., **शिमला - 171 004**
फोन : 0177-2814335, मोबाइल - 9418814335

• **दिल्ली :**
श्री आर.के. गौतम — 21/12, ग्राउंड फ्लोर, शक्ति नगर, **दिल्ली - 110 007**
फोन : 011-23840245, मोबाइल - 9654649307

• **लखनऊ :**
निरंकार सिंह — ए-13/6, पार्क रोड़ कालोनी, **लखनऊ - 222 601 (उ.प्र.)**
मोबाइल : 09451910615, 9807179204

• **देहरादून :**
ऋषभ पुंडीर — 152, ब्लॉक-2, करणपुर, **देहरादून (उत्तरांचल) - 248 001**
मोबाइल - 09927064893

• **जयपुर :**
सुनील कुमार वर्मा — 27, पटेल नगर, झोटवाड़ा, **जयपुर (राजस्थान)**
मोबाइल - 09214455539, 09829244439

• **मुम्बई :**
गौरव कौशिक — बी-404, लक्ष्मी कॉम्पलैक्स, वर्तक नगर, **थाणे (पश्चिम) - 400 606**
फोन : 22-25853131, मोबाइल - 09167576453

प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी एवं संपादक जगदीश चन्द्र कौशिक द्वारा 'हमारा भूमण्डल' पत्रिका मकान नं. 30, सेक्टर-13, अर्बन इस्टेट, कुरुक्षेत्र से प्रकाशित एवं एंकर प्रिंटिंग प्रेस, साधु मण्डी, नजदीक डाकघर, पिपली रोड़, कुरुक्षेत्र-136118 से छपवा कर अपने कार्यालय मकान नं. 30, सेक्टर-13, अर्बन इस्टेट, कुरुक्षेत्र से मुद्रित की गई।

©
'जन-शक्ति' नामक स्वयंसेवी संस्था के अन्तर्गत प्रकाशित **'हमारा भूमण्डल'** का यह विशेषांक **'देश का पर्यावरण - जनमानस की राय'** पर आधारित है। हमारा भूमण्डल **भारतीय समाचार-पत्रों के पंजीयक के कार्यालय से पंजीकरण संख्या HARHIN/2012/49148** के तहत पंजीकृत एक मासिक पत्रिका है। पत्रिका में प्रकाशित तमाम लेख मौलिक एवं अप्रकाशित हैं एवं इनके सर्वाधिकार तथा कॉपीराइट **'हमारा भूमण्डल'** तथा **'जन-शक्ति'** के पास सुरक्षित है। अतः पत्रिका में छपे किसी भी लेख के पुनः प्रकाशन एवं अन्य उपयोग के लिए पत्रिका से अनुमति लेनी अनिवार्य है। पूर्व लिखित अनुमति के बिना पूर्ण या आंशिक तौर पर ली गई सामग्री का किसी भी रूप में प्रयोग एवं प्रकाशन अवांछनीय एवं प्रतिबंधित है।

वार्षिक-शुल्क : ₹ 1100 | **एक प्रति का मूल्य : ₹ 100**

वार्षिक-शुल्क मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट द्वारा **'हमारा भूमण्डल'** के नाम पर बनाकर कोठी नं. 30, सेक्टर-13, अर्बन इस्टेट, कुरुक्षेत्र-136118 (हरियाणा) के पते पर भेजा जा सकता है। कृपया कुरुक्षेत्र से बाहर के चैकों में ₹20 अतिरिक्त शुल्क जोड़ कर भेजें।

सम्पादकीय

भावी पीढ़ी की रक्षा के लिए भी लगानी होगी प्रदूषण पर रोक

गत वर्ष इन्हीं दिनों राजधानी दिल्ली एवं इसके निकटवर्ती शहरों में वायु प्रदूषण, धूल और वाष्पकणों के घालमेल से बनी स्मॉग पूरे वातावरण पर छा गई थी। विशेषज्ञों ने इसके लिए हरियाणा, पंजाब और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों द्वारा पराली एवं दूसरी फसलों के अवशेषों को जलाने से उठे धुंए को उस दमघोटू वायु-प्रदूषण का कारण बताया था। संभवतः उनका दृष्टिकोण और अनुमान ठीक था। सर्वोच्च न्यायालय की पर्यावरण पर गठित श्री भूरेलाल की हाई पावर कमेटी ने तब पंजाब, हरियाणा, दक्षिणी उत्तर प्रदेश एवं राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में कार्यरत प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों के अधिकारियों को निर्देश दिया था कि वे किसानों को पराली एवं अन्य फसलों के अवशेष जलाने से रोकें, पराली जलाने को एक अपराध घोषित करें तथा उन किसानों को प्रोत्साहित करें जो पराली नहीं जलाते हैं। कमेटी ने अधिकारियों को फसलों के अवशेषों का सदुपयोग करने की योजनाएं बनाने के भी निर्देश दिए थे। गौरतलब है कि पंजाब और हरियाणा में तो वर्ष 2009 से ही माननीय पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय के निर्देश पर इन राज्यों के ब्लॉक स्तर तक पराली न जलाने के लिए अनेक जागरूकता अभियान चलाए गए थे। किसानों को धान की पराली एवं अन्य फसलों के अवशेषों को जलाने से वातावरण में बढ़ते प्रदूषण, धान की पराली जैसे फसलों के अवशेषों के विविध उपयोग कैसे हो जैसे विषयों पर जागरूक किया गया था। इन राज्यों के कई किसानों को तो यहां के प्रदूषण नियन्त्रण बोर्डों ने पराली जलाने के अपराध में दण्डित भी किया था क्योंकि उन्होंने सरकार की अधिघोषणा के बाद भी अपने खेतों में पराली जलाने का अपराध किया था। फिर भी, इन राज्यों में आज भी पराली को निर्बाध रूप से जलाया जा रहा है और प्रदूषण फैलाया जा रहा है। जाहिर है, इन दोनों राज्यों में ऐसे जागरूकता अभियान एक बार फिर से चलाने की जरूरत है।

दूसरी ओर, दिल्ली जैसे बड़े महानगरों में ही नहीं, देश के तमाम औसत दर्जे के शहरों में वाहनों से निकलने वाले धुंए से भी वायु-प्रदूषण में वृद्धि हो रही है जिससे कमोवेश स्मॉग जैसी स्थिति बनी ही रहती है। 'इंडियन फाउंडेशन ऑफ ट्रांसपोर्ट रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग' ने तो यहां तक दावा किया है कि देश के अधिकांश ट्रांसपोर्टर अपने फायदे के लिए तय उत्सर्जन मानकों को दरकिनार करके यहां के शहरों की हवा में ज़हर घोल रहे हैं। फाउंडेशन ने ट्रकों की ओवरलोडिंग की अनदेखी से लेकर दिल्ली में चलाए जा रहे अनेक छोटे वाणिज्यिक वाहनों को सी.एन.जी. में तब्दील न करके उन्हें डीजल से चलाने और नेशनल परमिट धारक ट्रकों को अवैध रूप से दिल्ली में चलाने तक के आरोप भी लगाए हैं। तेजी से बढ़ती शहरीकरण के कारण भी देश में प्रदूषण की रफ्तार बढ़ रही है। अप्रत्याशित दर से बढ़ते शहरों में जनस्वास्थ्य से लेकर स्वच्छ पानी, भोजन, ऊर्जा और सेनिटेशन तक की स्थिति बहुत खराब हो जाती है। शहरों का विस्तार होने से मलिन बस्तियां भी जन्म ले लेती हैं जबकि शहरी रिहायशी इलाकों तक में भीड़ और प्रदूषण बढ़ जाता है।

हमारे राजनेताओं को देश के लोगों के बेहतरीन जीवन एवं गुणवत्ता वाले शहरों और ग्रामीण कस्बों के विकास के लिए बेहतर योजनाएं बनानी चाहिए। हमारे नियामकों को भी सख्ती से नियमों एवं कानूनों को लागू न करने वालों पर कार्रवाई करनी चाहिए। प्रशासन के स्थानीय अधिकारियों और व्यापारियों को नगर नियोजन, जल निकासी, सड़क और परिवहन प्रणाली में सुधार करने तथा रिसाईक्लिंग कार्यक्रमों को लागू करने के साथ-साथ पर्यावरणपरक प्रौद्योगिकी- हरित प्रौद्योगिकी का उपयोग करने का संकल्प लेना चाहिए। हम सभी जाने-अनजाने भी अपने माहौल को प्रदूषित करते रहते हैं। उदाहरण के लिए सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान करके हम न केवल वातावरण में ज़हर घोलते हैं बल्कि पैसिव-स्मोकिंग से दूसरे लोगों को भी उनके न चाहने पर जबरदस्ती धूम्रपान का सैकिण्ड-हैंड धुंआ उन्हें पिलाते रहते हैं। हालांकि इस को रोकने के लिए पांच वर्ष पहले केन्द्र सरकार ने सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान करने के कृत्य को निषेध करते हुए उसे एक अपराध घोषित कर दिया था। परन्तु फिर भी बहुत से लोग उन लोगों की कतई भी परवाह नहीं करते हैं जो धूम्रपान नहीं करते हैं। ऐसे बहुत से लोगों को सार्वजनिक स्थानों पर सरेआम धूम्रपान करते देखा जा सकता है। अब समय आ गया है कि हम अपने पर्यावरण की तरह-तरह से फैल रहे प्रदूषणों से रक्षा करने का वचन लें। हमें अपने अथवा अपने परिवार की रक्षा के लिए ही नहीं बल्कि अपनी भावी पीढ़ी के लिए भी प्रदूषण पर रोक लगा कर पर्यावरण की रक्षा करनी होगी

हमारा भूमंडल

वर्ष : 9 अंकः 10 अक्टूबर, 2020

इस अंक

07 सावधान! वायु-प्रदूषण हृदय एवं मस्तिष्क के लिए है खतरनाक

12 प्लानिंग के अभाव में बस गई हजारों झोपड़-पट्टी और मलिन बस्तियां

21 उन्नत प्रोद्योगिकी अपना कर गोबर से प्राप्त की जा सकती है आर्थिक क्रांति

26 बिल गेट्स फाउंडेशन के सहयोग से विकसित की जा रही है सुरक्षित एवं किफायती शौचालयों की प्रौद्योगिकी

32 हमारे आकाश एवं वायुमंडल में छुपे हैं अनेक रहस्य

38 सांसों में घुलती जहरीली हवा से जीवन-अवधि हुई कई साल कम

44 फसलों के अवशेषों के निपटान के लिए चाहिए सरकारी संस्थागत मशीनरी का सहयोग

52 हिंसा एवं प्रदूषण के जनक हैं बुचडखाने, सरकार क्यों दे रही है संरक्षण?

60 प्रदूषण घटाने और सड़क-सुरक्षा में टायरों की भूमिका है लाजबाब

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

श्री प्रकाश जावडेकर
माननीय केन्द्रीय मंत्री,
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार
Tel: 011- 24695132, 24695136, 24695329
Indira Paryavaran Bhawan, Jorbagh Road,
New Delhi-110003
Tel: 011-24695132, 24695136, 24695329
Email: mefcc@gov.in

श्री बाबुल सुप्रियो
माननीय राज्य मंत्री,
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय,
भारत सरकार
Indira Paryavaran Bhawan, Jorbagh
Road,
New Delhi-110003
Tel: 011- 24621921, 24621922

श्री रामेश्वर प्रसाद गुप्ता, आईएएस (गुजरात-1987)
सचिव, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
फ़ोन: 011- 24695262, 24695265,
24695270(F)
ईमेल: secy-moef@nic.in

श्री सिद्धंता दास, आईएफएस (ओड़िसा: 1982)
डाइरेक्टर जनरल ऑफ फारेस्ट (वन
महानिदेशक)और विशेष सचिव
फ़ोन: 011- 24695282, 24695278,
24695412 (F)
ईमेल: dgfindia@nic.in

केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, भारत सरकार

श्री शिव दास मीना आई ए एस ,
अध्यक्ष,
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड
टेलीफोन: 011- 43102202
ई-मेल: ccb.cpcb@nic.in

डॉ. प्रशांत गर्गवा
सदस्य सचिव,
केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड
टेलीफ़ोन: 011- 22303655, 43102207,
43102428
ई-मेल: mscb.cpcb@nic.in
prashant_gargava@hotmail.com

पर्यावरण एवं वन विभाग हरियाणा सरकार

श्रीमती धीरा खंडेलवाल IAS
Additional Chief Secretary to Govt. Haryana,
Environment Department,
R. No. 108, 7th Floor, Main Secretariat,
Sector-1, Chandigarh
Tel: 0172-2740128
Email: dheera.acs@gmail.com

श्री कंवरपाल सिंह गुर्जर
पर्यावरण मंत्री, हरियाणा सरकार
Room No. 34/8, Secretariat,
Sector-1, Chandigarh
Tel: 0172-2740010,

हरियाणा प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड

श्री अशोक खेत्रपाल
Chairman,
Haryana State Pollution Control Board,
C-11, Sector-6. Panchkula-134109,
Haryana
Tel: +91 172-2581005, 2581006
Fax: +91 172 2581201
Email: hspcbho@gmail.com

श्री एस नारायणन, IFS
Member Secretary,
Haryana State Pollution Control Board,
C-11, Sector-6. Panchkula-134109, Haryana
Email: hspcbms@gmail.com
Tel: 0172-2581105(O),
Fax: 0172-2564093

विज्ञान, प्रोद्योगिकी एवं पर्यावरण मंत्रालय, पंजाब सरकार

कैप्टेन अमरिंदर सिंह
Chief Minister
Government of Punjab & Minister In charge
Department of Science, Technology
& Environment,
Room No.1, 2nd Floor, Punjab Civil
Secretariat, Sector - 1, Chandigarh-160001
Tel: 0172-2740325, 2740769, 2743463
Email: cmo@punjab.gov.in

श्री आलोक शेखर श्रीवास्तव, आई ए एस
(Punjab 1994)
General Administration & Coordination and in addition Principal Secretary, Science Technology and Environment and in addition Principal Secretary, Parliamentary Affairs,
Punjab Civil Secretariat, Sector - 1,
Chandigarh-160001, Tel: 0172-2743442,
Email:secy.te@punjab.gov.in

पंजाब प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड

श्री सतविंदर सिंह मरवाहा
Chairman,
Punjab Pollution Control Board,
Vatavaran Bhawan,
Nabha Road, Patiala- 147001
Tel: 0175-2215793
Email: chairman.ptl.ppcb@punjab.gov.in

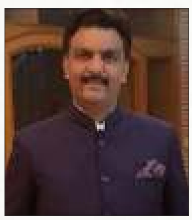

श्री क्रुनेश गर्ग
Member Secretary,
Punjab Pollution Control Board,
Vatavaran Bhawan,
Nabha Road, Patiala- 147001
Tel: 0175-2215802
Email: msppcb@punjab.gov.in

पर्यावरण मंत्रालय, हिमाचल प्रदेश

श्री जयराम ठाकुर,
Chief Minister,
Himachal Pradesh Government,
E-100, Armsdale Building, Himachal
Pradesh Government Secretariat,
Shimla - 171002, Himachal Pradesh
Tel: 0177-2625400, 2625819, 2624554
Email: cm-hp@nic.in, jr.thakur@nic.in

श्री गोविन्द सिंह ठाकुर
Forest Minister, Himachal Pradesh
Government,
E-212, Armsdale Building, Himachal Pradesh
Government Secretariat,
Shimla - 171002, Himachal Pradesh
Tel: 0177-2621488, 2880748
Mobile: 98160-13202
Email: tptmin-hp@nic.in

श्री रजनीश, आईएएस, (HP-97)
ASecretary (IPR and Environment Sc. & Tech.) to the Govt. of HP + Chairman, HP State Pollution Control Board, Shimla. Him Parivesh, Phase-III,New Shimla 171009. Himachal Pradesh
Mobile: +91 8800300999,
Email: envsecy-hp@nic.in

डा. राज कृशन परूथी, IAS
Member Secretary,
H.P. State Pollution Control Board,
Him Parivesh, Phase-III,
New Shimla-171009. Himachal Pradesh
Tel: 0177 2673766
Mobile: 94184 55298
Email: Email: mspcb-hp@nic.in

चंडीगढ़ प्रशासन

श्री वी. पी. सिंह बदनोर
Hon'able Governor of Punjab & Administrator of U.T. Chandigarh,
Punjab Raj Bhawan, Sector 6,
Chandigarh-160019
Tel: 0172- 2740740(O), 2740608 (R),
Email: admr-chd@nic.in

श्री मनोज कुमार परीदा, IAS
Adviser to the Administrator, U.T. Chandigarh,
Chandigarh Administration Secretariat,
Sector 9, Chandigarh-160009
Tel: 0172- 2740154 (O), 2791140 (R),
Email: adviser-chd@nic.in

चंडीगढ़ प्रदूषण नियंत्रण कमिटी

श्री देबेन्द्रा दलाई, IFS
Director Environment & Chief Conservator of Forests,
Chandigarh Administration,
Paryavaran Bhawan, Sector- 19-B,
(U.T.) Chandigarh--160019
Tel: 0172-2700284
Email: cf-chd@chd.nic.in
ccf.chandigarh@gmail.com

श्री अरुण कुमार गुप्ता, IAS
Principal Secretary, Home & Environment
Chandigarh Administration,
Fourth Floor, UT Secretariat,
Sector-9, Chandigarh-160009
Tel: +91 172 2740008
Email: hs-chd@nic.in

पंजाब के मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिंदर सिंह का सन्देश

प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों पर सख्ती से पेश आने की है जरूरत: कैप्टन

पर्यावरण रक्षा के लिए कड़ा रुख अपनाते हुए पंजाब के मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिन्दर सिंह ने हर नागरिक को सांझे तौर पर प्रयास करने का आह्वान किया। उन्होंने प्रदूषण की रोकथाम के लिए पर्यावरण के मापदण्डों के पालन के लिए उद्योग के साथ सख्ती से पेश आने की जरूरत पर भी जोर दिया। मुख्यमंत्री ने कहा कि सरकार नीतियां बनाकर उनको लागू कर सकती है, लेकिन उसे वास्तविक रूप देने के लिए हर नागरिक द्वारा निजी यत्न किए जाने की जरूरत है। उद्योगों द्वारा पर्यावरण नियमों का सख्ती से पालन करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। मुख्यमंत्री ने लोगों को भूजल की संभाल के लिए जिम्मेदारी निभाने का न्योता दिया। अगले 20 साल में पंजाब के मरुस्थल बन जाने की रिपोर्टों का जिक्र करते हुए मुख्यमंत्री ने कहा कि मुफ्त बिजली और पानी के साथ इसकी बर्बादी हुई है, जिस कारण इस सम्बन्ध में किसानों को अपनी जिम्मेदारी का एहसास करने की जरूरत है।

हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर का सन्देश

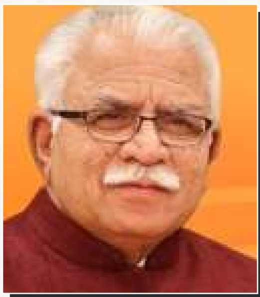

हरियाणा की सभी पालिकाओं में होगा सेप्टिक प्रबंधन: खट्टर

हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर ने प्रदेश के सभी शहरी क्षेत्रों में सेप्टिक प्रबंधन के लिएआवश्यक दिशा-निर्देशों को मंजूरी प्रदान की है। राज्य की सभी नगर पालिकाओं को निर्देश दिए गए हैं कि वे निकाय क्षेत्र के दायरे में उन तमाम टैंकरों का पंजीकरण करें, जो क्षेत्र में घर और अन्य स्थानों से सेप्टिक वेस्ट निकालने का काम करना चाहते हैं। बिना पंजीकरण के चलने वाले सेप्टिक टैंकरों को भारी जुर्माने का सामना करना होगा। गुरुग्राम की तर्ज पर प्रारंभ होने वाले सेप्टिक प्रबंधन में पालिका स्तर पर स्थानीय अनुकूलता के मुताबिक व्यवस्था बनाई जाएगी। यह सुनिश्चित किया जाएगा कि किसी भी घर या संस्थान से निकला सेप्टिक वेस्ट खुले में न डलने पाए जिससे बीमारी को दावत मिले। प्रदेश के शहरी क्षेत्रों में सेप्टिक प्रबंधन को लेकर अब तक कोई नीति नहीं होने के कारण निजी सेप्टिक टैंकर घर अथवा व्यावसायिक प्रतिष्ठानों से निकाला गया सेप्टिक वेस्ट मौका देखकर कहीं भी खुले स्थान पर अथवा बरसाती पानी नाले में डालकर न केवल महामारी फैलने की संभावना को बढ़ावा दे रहे थे, बल्कि वे पर्यावरण को भी क्षति पहुंचा रहे थे।

हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री जय राम ठाकुर का सन्देश

हिमाचल प्रदेश सरकार पर्यावरण अनुकूल पर्यावरणीय प्रथाओं के माध्यम से प्रदेश को प्रदूषण मुक्त रखने के लिए प्रतिबद्ध हैं। पर्यावरणीय हस्तक्षेप के माध्यम से राज्य के लोगों के हित एवं उनकी भलाई के लिए सुधार करना ही उनका उद्देश्य है। उन्होंने लोगों से आह्वान किया है कि आओ, हम सब अपने राज्य और देश के पर्यावरण की रक्षा करें।

सावधान! वायु-प्रदूषण हृदय एवं मस्तिष्क के लिए है खतरनाक

भूपिंदर सिंह रिणवा

गंदी हवा में सांस लेने से हमारे दिल और फेफड़ों को तो नुकसान पहुंचता ही है, लेकिन अब नए शोध से यह भी पता लगा है कि प्रदूषित हवा हमारे दिमाग पर भी इतना प्रतिकूल असर डालती है कि उम्रदराज लोगों को कुछ भी याद नहीं रहता है। प्रोसीडिंग्स इन द नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया है कि लंबे समय तक पार्टिकुलेट मैटर, सल्फर डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के संपर्क में रहने के कारण लोगों में संज्ञानात्मक गिरावट आई है। कम पढ़े-लिखे पुरुष विशेष रूप से ज्यादा प्रभावित हुए और उनसे पूछे गए मौखिक और गणित के प्रश्नों के सही जबाव दे सके।

वैज्ञानिक और स्वास्थ्य अधिकारी अभी भी यह अध्ययन कर रहे हैं कि वायु प्रदूषक मस्तिष्क के साथ कैसे संपर्क करते हैं। बीजिंग की नॉर्मल यूनिवर्सिटी के एक शोधकर्ता शिन झांग कहते हैं कि वायु प्रदूषण संभवतः मस्तिष्क में सफेद पदार्थ पर अधिक नुकसान डालता है जो भाषा की क्षमता से जुड़ा है। पिछले अध्ययनों में पाया गया था कि औसतन मादा दिमाग में नर दिमाग की तुलना में अधिक सफेद पदार्थ होते हैं, जिसका अर्थ है कि सफेद पदार्थ को नुकसान पुरुषों में ज्यादा होता है, उनमे संज्ञानात्मक गिरावट का सामना करने का जोखिम अधिक होता है। झांग इस मुद्दे पर और रिसर्च करने के लिए कहते हैं। हालांकि, चीनी अध्ययन एक महत्वपूर्ण कड़ी पर प्रकाश डालता है, फिर भी वायु प्रदूषण मस्तिष्क को कैसे बदलता है इस पर और रिसर्च करने की जरुरत है।

पिछले एक दशक में ही वायु प्रदूषण और मस्तिष्क स्वास्थ्य पर शोध तेज हुआ है। वैज्ञानिकों का कहना है कि एक स्वस्थ मनुष्य एक दिन में 10,000 लीटर हवा को सांस के द्वारा लेता है। प्रदूषण के कण मस्तिष्क में कैसे प्रवेश करते हैं, वे किस कार्य को प्रभावित करते हैं और कितने समय तक वे एक बार वहां रहते हैं, इसके सटीक तंत्र को समझने के लिए और अधिक शोध किए जाने की आवश्यकता है। वायु प्रदूषण के कण नाक से मस्तिष्क तक घ्राण नसों के साथ आगे बढ़ सकते हैं या वे रक्त में मिल सकते हैं। क्षति सूजन के कारण भी हो सकती है। फेफड़ों और मस्तिष्क के अलावा, अध्ययनों ने वायु प्रदूषण को खराब हृदय स्वास्थ्य और मधुमेह से भी जोड़ा है। यह आश्चर्य की बात है कि वायु प्रदूषण से कितने अंग प्रभावित होने लगते हैं।

यूनिवर्सिटी ऑफ़ नॉर्थ कैरोलिना के पर्यावरण विषविज्ञानी डैन कोस्टा बताते हैं, क्योंकि मानव शरीर की आंतरिक बनावट बहुत

आपस में जुड़ी हुई है, अत: वायु प्रदूषण न केवल फेफड़ों, बल्कि हृदय, मस्तिष्क और प्रजनन प्रणाली को न्यूनतम रूप से प्रभावित करता है। जब शरीर के भीतर कुछ आता है, तो यह संभावित रूप से विषाक्त होता है, जिसका निहितार्थ हर जगह होता है। उन्हें संदेह है कि प्रदूषक मस्तिष्क में रक्त प्रवाह के माध्यम से पहुंचते हैं।

मनुष्य का सारा खून फेफड़ों को छोड़ता हुआ दिल से गुजरता है, जहां से फिर इसे शरीर के बाकी हिस्सों में पंप किया जाता है। डैन कोस्टा को संदेह है कि यह प्रतिरक्षा प्रणाली को सक्रिय करता है, जिससे सूजन होती है।

समय के साथ, बहुत अधिक जहरीले कणों से बहुत अधिक सूजन हो सकती है, जो बहुत तेज हो सकती है और इससे बहुत जल्दी दिमाग की उम्र बढ़ती है। मस्तिष्क का अध्ययन करने के लिए यह एक बहुत ही जटिल अंग है। और क्योंकि यह अपेक्षाकृत नई अनुसंधान हदों में है, इसको कई परिवर्तनीय वस्तुओं, जो मस्तिष्क रसायन विज्ञान को बदल सकती हैं के कारण अधिक जटिल बना दिया गया है। मस्तिष्क में प्रक्रियाओं का एक जटिल नेटवर्क है और यह कार्यक्षमता का एक उच्च स्तर है जो अन्य अंगों को नहीं है।

आज के लोग 70 साल पहले की तुलना में ज्यादा लंबे समय तक जीवित रहते हैं, जबकि पहले वातावरण में उद्योगों द्वारा काली कालिख पोती गई थी। यह कम से कम आंशिक रूप से इस बात का कारण हो सकता है कि डॉक्टर अब शरीर के माध्यम से वायु प्रदूषण के सभी तरीकों को देख रहे हैं।

पार्टिकुलेट मैटर, जो कि वाइल्डफायर से जीवाश्म ईंधन के दहन तक किसी भी चीज से उत्पन्न हो सकता है, को काफी हद तक वायु प्रदूषक माना जाता है और यह स्वास्थ्य के लिए सबसे खतरनाक है। लेकिन इसके किसी एक कण के प्रभाव को कम करना मुश्किल हो सकता है क्योंकि खराब वायु गुणवत्ता वाले क्षेत्रों में अक्सर एक से अधिक प्रकार के प्रदूषक होते हैं।

पिछले दो दशकों में, आंकड़ों से पता चलता है कि बीजिंग अध्ययन में पहचाने गए सभी तीन प्रदूषक अमेरिका में कम हो गए हैं। हालांकि, वे बड़े शहरी औद्योगिक केंद्रों के साथ विकासशील क्षेत्रों में अवश्य मौजूद हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की इस साल प्रकाशित हुई एक रिपोर्ट में बताया गया है कि दुनिया भर में 10 में से नौ लोग प्रदूषित हवा में सांस ले रहे हैं। हालांकि, अमेरिकन लंग एसोसिएशन अमेरिका में उक्त आंकड़े में 10 में चार लोगों की बात कह रही है। यह सही है कि हम ने वायु-प्रदूषण के कुछ स्त्रोतों पर तो अंकुश लगा लिया है, फिर भी कोयले से चलने वाले बिजली संयंत्र और डीजल जनरेटर वायु प्रदूषण के कुछ सबसे खतरनाक स्रोत बने हुए हैं। वायु प्रदूषण के

विभिन्न रूपों से निपटने के लिए बेहतर सार्वजनिक परिवहन सेवा और बेहतर शहर नियोजन में बदलाव की आज नितांत आवश्यकता है।

बाहरी वायु प्रदूषण विश्व स्तर पर मृत्यु और बीमारी के प्रमुख कारणों में से एक है। वैश्विक स्तर पर 42 लाख लोगों की समय से पहले होने वाली मौतें वायु प्रदूषण से जुड़ी हुई हैं, मुख्य रूप से हृदय रोग, स्ट्रोक, फेफड़ों के कैंसर और बच्चों में तीव्र श्वसन संक्रमण से यर मौतें होती हैं।

वायु-प्रदूषण में घातक प्रदूषक तत्व पार्टिकुलेट मैटर अर्थात महीन कण, ओजोन, नाइट्रोजन डाइ ऑक्साइड और सल्फर डाइ ऑक्साइड आदि होते हैं। पार्टिकुलेट मैटर फेफड़े के मार्गों में गहराई से प्रवेश कर सकता है और हृदय, मस्तिष्कवाहिकीय और श्वसन इन्फेक्शन जैसे प्रभावों के कारण रक्तप्रवाह में प्रवेश कर सकता है।

बच्चों और वयस्कों में, बाहरी वायु प्रदूषण के अल्प और दीर्घकालिक दोनों जोखिम होते हैं जिनमें संक्रमण फेफड़ों के कार्यों को कम कर सकता है और श्वसन संक्रमण को बढ़ा सकता है।पार्टिकुलेट मैटर दुनिया के विकसित और विकासशील देशों में एक बढ़ती पर्यावरणीय समस्या है।चूंकि, पूर्ण पार्टिकुलेट मैटर कई प्रदूषकों के योगदान का एक संयोजन है - प्राथमिक उत्सर्जन और सल्फर डाइऑक्साइड एवं नाइट्रोजन ऑक्साइड के उत्सर्जन में माध्यमिक योगदान, इस प्रदूषक के आसपास शहरी वायु प्रदूषण रणनीतियों का विकास हुआ है।

कई प्रदूषकों में से, मानव स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी पर पार्टिकुलेट मैटर प्रदूषण के प्रभाव सबसे बड़े हैं और शहरी और ग्रामीण (इनडोर वायु प्रदूषण पर केंद्रित) क्षेत्रों में इसका प्रभाव सबसे अधिक सामने आया है।

भारत के शहरों में वायु की गुणवत्ता में दिनोंदिन गिरावट आती जा रही है। 2007 में भारत के ५६ प्रतिशत शहरों में पार्टिकुलेट मैटर की स्थिति गंभीर थी, जबकि 2017 में 79 प्रतिशत शहरों में पार्टिकुलेट मैटर की स्थिति गंभीर है। अत: वायु प्रदूषण के विभिन्न रूपों से निपटने के लिए बेहतर सार्वजनिक परिवहन सेवा और बेहतर शहर नियोजन में बदलाव की आज नितांत आवश्यकता है।

NABH ACCREDITED

SIDHARTH HOSPITAL

HEART CARE, MATERNITY & ULTRASOUND CENTRE
Ladwa Road, Shahabad (M) Ph. 01744-242838, 244938

DR. DEEPAK SHARMA
M.D. (Medicine)
(Consultant Physician & Cardiodiabetologist
Ex. Registrar Cardiology, PGIMS, Rohtak
Ex. Senior Research Fellow, PGIMS, Rohtak
Ex. Consultant, Appollo Medical Centre, Narwana
Consultant Medical & ECG Examiner LIC

DR. ANJALI SHARMA
M.D. (Gynae-Obs.)
PGIMS, Rohtak
Ex. Consultant Appollo Medical Centre, Narwana
Consultant, Medical Examiner

उपलब्ध सुविधाएं

- चिकित्सा एवं कार्डियोलॉजी
- ईको कार्डियोग्राफी / कलर डॉप्लर
- टी.एम.टी.
- कम्प्यूटराईजड 12 चैनल ई.सी.जी.
- डिफिब्र मॉनीटर
- स्त्री रोग एवं सर्जरी
- मॉड्यूलर ऑपरेशन थियेटर
- **प्रसूति गृह**
- **दर्द रहित प्रसव के लिए विशेष सुविधा**
- 4-डी अल्ट्रासाउंड
- डिजिटल एक्स-रे
- पूरी तरह से आधुनिक आई.सी.यू.
- एच.डी.यू. (उच्च निर्भरता इकाई)
- मधुमेह रोगियों के लिए डॉपलर
- कृत्रिम सांस
- डायलिसिस सेंटर
- लैबोरटरी 24×7
- फार्मेसी 24×7
- फीटल डॉप्लर
- सरकार द्वारा स्वीकृत एम.टी.पी. केंद्र
- दाखिल मरीजों के लिए मुफ्त साफ-सुथरा भोजन
- रेगुलर और विजिटिंग डॉक्टर
- फिजियो थेरिपी
- डाईटिशियन

Visiting Consultants

Dr. R.K Jaswal
DM Cardio **(4th Thursday)**

Dr. Jagtar Singh
MD (Psychiatry) **(Every Monday)**

Dr. Nitin Gupta
Urologist **(1st Tuesday)**

Dr. Himanshu Jain
MCH (Neuro) **(Every Friday)**

Dr. Sandeep Kaur
Dietitian **(Every Sunday)**

Dr. Moti Lal
MD, Anaesthetist

Dr. Gagandeep Gupta
Orthopedic **(1st & 3rd Thursday)**

Dr. Shidhant Bansal
Nephrologist **(2nd Tuesday)**

Dr. Sukhchain Bhullar
Nephorlogist **(Every Friday)**

OUR ACHIEVEMENTS :

» First NABH Accreditation Hospital in this region.
» Top 10 in India Achieving Ayushman Gold Certificate

Facilities of Empanelment:

- **Ayushman Bharat Scheme**
- **Haryana Govt. Empoyees**
- **ECHS**
- **ESI**
- Star Health and Allied Insurance Co.
- Raksha TPA
- Paramount TPA
- ICIC Lombard
- HDFC ERGO
- Future Genrali
- Wellnex (Pre Policy)
- Medi Assist (Pre Policy)
- MDINDIA (Pre Policy)
- Choamandalam

PATIENT CARE SERVICES

-24x7 Emergency Care
-24x7 Intensive Care Unit
-24x7 Ambulance Service
-24x7 Pharmacy
-24x7 Dialysis Service

जगदीश चन्द्र कौशिक

प्लानिंग के अभाव में बस गईं हजारों झोपड़-पट्टी और मलिन बस्तियां

किसी **मलिन बस्ती** का वर्णन करें तो उन क्षेत्रों को ऐसी बस्तियां कहते हैं जहां पर बहुसंख्यक लोग एक प्रदूषित वातावरण में अपर्याप्त सफाई-व्यवस्था, पेयजल, बुनियादी स्वच्छता के साथ-साथ घटिया किस्म के मकानों और झोपड़पट्टियों में रहने पर मजबूर हैं। '**स्लम एरिया (सुधार और क्लीयरेंस) अधिनियम, 1956**' के तहत **स्लम** और **झोपड़पट्टियों** को तीन वर्गों में बांटा गया है।

1. **स्लम एक्ट** के तहत '**नोटिफाइड स्लम्ज**' उन अधिसूचित गंदी बस्तियों को कहते हैं, जिन्हें एक शहर या उस शहर में निर्दिष्ट क्षेत्रों, जिन्हें राज्य सरकार या स्थानीय प्रशासन ने स्लम अधिनियम के तहत '**गंदी बस्ती**' के रूप में **अधिसूचित** किया हुआ है।
2. **मान्यता प्राप्त मलिन बस्तियां** वे मलिन बस्तियां होती हैं, जिन्हें औपचारिक रूप से किसी भी कानून के तहत झुग्गी-बस्ती के तौर पर अधिसूचित नहीं किया गया है, परंतु वे राज्य सरकार, स्थानीय प्रशासन और केंद्र शासित प्रदेशों के प्रशासन तथा आवास एवं स्लम बोर्ड के द्वारा मलिन बस्ती के रूप में **पहचानी गई मान्यता प्राप्त** बस्तियां हैं।
3. **चिन्हित की गई मलिन बस्तियां** एक ऐसे क्षेत्र में पनपी बस्तियां होती हैं, जहां अपर्याप्त बुनियादी ढांचे और उचित स्वच्छता के अभाव और गंदे वातावरण में **60-70 परिवारों** के कम से कम **300 लोगों** की आबादी रहती हो। घटिया और दोयम दर्जे के घरों वाला यह एक ऐसा **कॉम्पेक्ट क्षेत्र** होता है, जहां अपर्याप्त बुनियादी ढांचा और उचित साफ-सफाई, स्वच्छता और सुरक्षित पेयजल की भयंकर कमी होती है।

महानगरों की गगनचुंबी इमारतों के बीच झुग्गियों वाली बस्तियों को देखना कितना भी आश्चर्यजनक लगता हो, परंतु यह एक कटु सच्चाई है कि हमारे देश भारत के महानगरों में ही नहीं मध्यम दर्जे के शहरों में भी हजारों मलिन बस्तियां वजूद में आई हुई हैं। ग्रामीण इलाकों से शहरों में हो रहे पलायन, बढ़ती शहरी-गरीबी एवं असमानता, यहां रहने की असुरक्षित समयावधि और तेजी से हो रहा भूमंडलीकरण जैसे कारक मलिन बस्तियों के निर्माण और उनकी निरंतरता में योगदान देने वाले मुख्य कारण हैं। शहरी विकास की नीतियों को शहर के विकास के साथ न जोड़ने के कारण भी भारत सहित कई विकासशील देशों में बहुत से अप्रवासी लोग सार्वजनिक या नगर निगमों/नगर परिषदों की जमीनों पर अवैध रूप से काबिज हो गए हैं और उन्होंने वहां रहने के लिए झुग्गीनुमा बुनियादी ढांचा खड़ा करके वहां पर अवैध मलिन बस्तियां बसा ली हैं। ऐसी मलिन बस्तियां शहरी आबादी के बिल्कुल निकट या शहर के बीचोबीच वजूद में आई हुई हैं तथा अनौपचारिक रूप से बसे यहां के लोग बुनियादी नागरिक सुविधाओं के अभाव में निर्धनता में रहने को मजबूर हैं।

सन् 1950 ई. के बाद से हमारे देश में कृषि के विकास में बहुत गिरावट आई और लगभग 30 प्रतिशत ग्रामीण लोग बेरोजगार हो गए, जिन्होंने शहरों के कथित आर्थिक अवसरों का दोहन करने के लिए बड़े शहरों की ओर रूख किया, जहां उन्हें मजबूरन मलिन बस्तियां बसाकर रहना पड़ा। इसके अलावा, हमारे देश में **उद्योगों** और **सेवा-क्षेत्रों** का विकास मुख्य रूप से शहरों में ही केंद्रित है, लेकिन शहरी प्रशासन का सार्वजनिक भूमि के उचित प्रबंधन और कानून व्यवस्था को लागू करने में बहुत ढीलापन रहा है, जिसके चलते ग्रामीण एवं सुदूर क्षेत्रों से आने वाले लोगों ने शहरों की खाली जमीनों पर कब्जा करके वहां मलिन बस्तियां बसा ली। परंतु, ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन करके आने वाले लोगों को तमाम जन-सुविधाओं के साथ समायोजित करने के लिए शहरों में कोई फालतू जमीन उपलब्ध नहीं है। परिणामस्वरूप, सार्वजनिक पार्कों, खेल के मैदानों, रेलवे लाइनों के साथ अथवा किसी भावी योजनाओं के लिए आरक्षित जमीनों पर भी ऐसी बस्तियां बसती चली गई।

केंद्रीय आवास एवं शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों के मुताबिक सन् 2011 ई. की

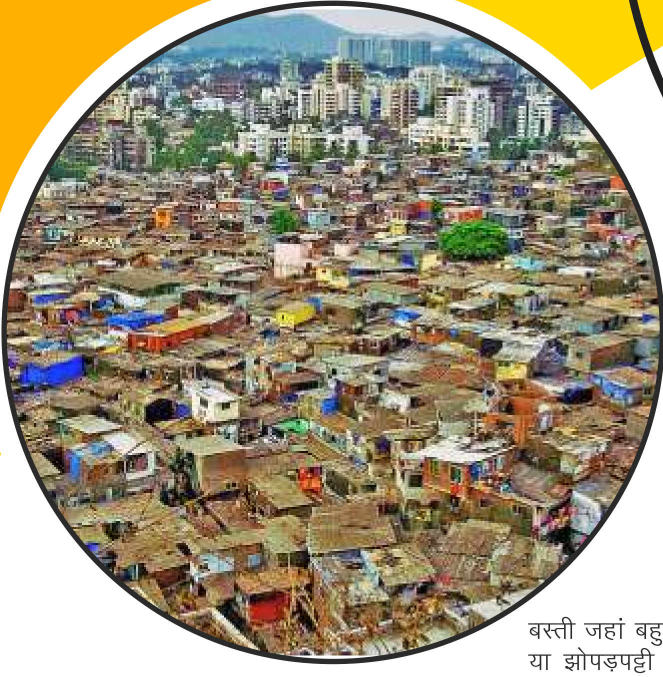

जनगणना में दूसरी बार स्लम आबादी का अध्ययन किया गया। इस जनगणना में स्लम आबादी गत जनगणना के बाद 23 प्रतिशत की वृद्धि दर से बढ़कर आज लगभग 15 करोड़ तक पहुंच गई है। सन् 2001 ई. में कराई गई जनगणना में यह पता चला था कि उस समय देश के **640 शहरों** में लगभग **4.26 करोड़ आबादी** मलिन बस्तियों में रहती है। ज्ञात हो, उक्त गणना **50 हजार** से अधिक आबादी वाले शहरों में कराई गई थी, जबकि इससे कम आबादी वाले शहरों के स्लम से जुड़े आंकड़े सरकार के पास उपलब्ध ही नहीं हैं।

देश में स्लम और गंदी बस्तियां तेजी से क्यों विकसित हो रही हैं? इस सम्बंध में भारत सरकार द्वारा नियुक्त **प्रणब सेन कमेटी** का कहना है कि मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों में घरेलू काम करने वाले नौकर, रसोइये, ड्राईवर, निर्माण मजूदर, सब्जी और फल बेचने वाले लोग और चौकीदारी या चपड़ासी जैसा काम करने वाले लोग होते हैं, जिनके लिए शहरी मास्टर प्लानों में कोई भी जगह आरक्षित नहीं की जाती है। इस कमेटी का यह भी कहना है कि अस्थायी तौर पर 20 परिवारों की एक ऐसी बस्ती जहां बहुत ही घटिया किस्म के मकान या झोपड़पट्टी आदि बनी हों और वहां पर स्वच्छता और सेनिटेशन के हालात बहुत खराब हों तथा पीने के पानी तक की किल्लत हो तो ऐसी बस्ती को भी **स्लम** या **मलिन बस्ती** की श्रेणी में प्रदर्शित करना आवश्यक है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की **संयुक्त राष्ट्र आवास एजेंसी-'यू.एन. हेबीटेट'** के अनुसार एक स्लम या मलिन बस्ती घटिया आवास, गंदगी और टूटे-फूटे बुनियादी ढांचे वाली एक ऐसी बस्ती होती है, जहां स्वच्छता, पीने के पानी की किल्लत होने के साथ-साथ उस बस्ती में भविष्य की सुरक्षा का भी सदैव अंदेशा रहता है। विश्व में आधे से ज्यादा स्लम क्षेत्र विकासशील देशों में हैं। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि **धारावी** में जनसंख्या का घनत्व **10 लाख** व्यक्ति **प्रति वर्गमील** है। इन देशों में शहरी आबादी बढ़ने का कारण भी यही है कि ग्रामीण लोग शहरों की ओर पलायन करके आ रहे हैं। शहरी स्लम क्षेत्रों एवं झोपड़पट्टियों में रहने वालों को वस्तुतः निर्धनता एवं रोजगार का तो कोई खतरा नहीं है। उन्हें तो बस पीने के स्वच्छ पानी तथा सेनीटेशन की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। इसके अतिरिक्त उनमें अतिक्रमण किए गए **भूखण्ड से खदेड़ दिए जाने की आशंका** भी सदैव बनी रहती है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो शहरों के नगर निगमों एवं नगर परिषदों के स्कूलों में स्लम क्षेत्रों से आने वाले बहुत से छात्रों का व्यवहार उनके परिवेश के कारण बहुत खराब पाया गया है। ऐसे छात्र आमतौर पर फिल्मों और टीवी से ज्यादा प्रभावित होते हैं तथा वे अपने सहपाठियों के साथ छोटी-छोटी बातों पर भी लड़ाई-झगड़ा करने पर आमादा पाए गए हैं। इन स्कूलों में पढ़ाने वाली महिला अध्यापिकाओं के लिए स्लम क्षेत्रों से आने वाले बच्चों के झगड़े सुलझाना बहुत कठिन काम होता है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि ऐसी घटनाएं रोकने के लिए इन छात्रों एवं उनके अभिभावकों के बीच अच्छे व्यवहार से सम्बंधित जागरूकता जगाने की बहुत जरूरत है। **संयुक्त राष्ट्र पर्यावास** की रिपोर्ट है कि कुछ मलिन बस्तियों में बहुत ज्यादा अपराध होते हैं, विशेषकर शहर के भीतरी क्षेत्रों में बसी मलिन बस्तियों में तो कुछ बड़े शातिर अपराधी और असामाजिक तत्त्व भी पनपते हैं।

ब्राजील के **'रियो-द-जनेरियो'** के उत्तर में स्थित स्लम में इतने दुर्दांत अपराधी रहते हैं कि उन्हें पकड़ने और उन्हें उस क्षेत्र से खदेड़ने के लिए सरकार को वहां पुलिस ही नहीं सेना भी बुलानी पड़ी ताकि वहां इसी वर्ष होने वाले फुटबॉल के **'वर्ल्ड कप'** और इसके दो वर्ष बाद होने वाले **ऑलम्पिक खेलों** के आयोजन व खिलाड़ियों की सुरक्षा-व्यवस्था में किसी तरह की चूक न हो। परंतु, बहुत सी मलिन बस्तियां अपराध के मुख्य स्रोत नहीं हैं तथा कुछ मलिन बस्तियां तो स्वयं ही अपराधियों से त्रस्त पाई गई हैं।

'यू.एन. हेबीटेट' के अनुसार विश्व में जनसंख्या बढ़ने से मलिन बस्तियां भी बढ़

रही हैं और वहां पर लोगों की संख्या भी बढ़ रही है। आज विश्व की मलिन बस्तियों और स्लम क्षेत्रों में लगभग **100 करोड़ लोग** रह रहे हैं, परन्तु अनुमान है कि सन् 2030 ई. तक इनकी संख्या **200 करोड़** तक हो जाएगी। जहां तक विश्व भर के स्लम क्षेत्रों का प्रश्न है, दुनिया में सबसे बड़ा स्लम **मैक्सिको** शहर में '**नेजा-चाल्को-इटजा**' नामक स्लम कलस्टर है। इस स्लम में **40 लाख लोग** रहते हैं। यहां अन्य मलिन बस्तियों की भांति बुनियादी जरूरतों का तो अभाव है ही, इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस स्लम कलस्टर में अधिकांश लोग अवैध तरीके से रह रहे हैं।

पाकिस्तान के शहर **कराची** का स्लम '**ओरंगी टाऊन**' 22 वर्गमील के क्षेत्र में बसा हुआ है। इस मलिन बस्ती में **15 लाख** लोग रहते हैं। मुम्बई का '**धारावी**' कुछ वर्ष पहले तक **एशिया का सबसे बड़ा स्लम क्षेत्र** था, परन्तु 557 एकड़ के क्षेत्र में फैले इस स्लम को मुम्बई के अन्य स्लम क्षेत्रों ने पीछे छोड़ दिया है। मुम्बई विश्व का पांचवा सबसे बड़ा शहर है, परन्तु इसकी **आधी से ज्यादा जनसंख्या** स्लम और मलिन बस्तियों में रहती है। यहां के नए स्लम क्षेत्रों- '**कुर्ला-घाटकोपर बेल्ट**', '**मानखुर्द- गोवंदी बेल्ट**' तथा **भन्डूप से लेकर मुलुन्ड** तक की **योगी और यऊर** नामक पहाड़ियों की ढलानों पर **संजय गांधी राष्ट्रीय पार्क** के साथ बसे स्लम क्षेत्रों ने धारावी को सन् 2011 ई. में हुई जनगणना में पीछे छोड़ दिया था। इसी क्रम में दक्षिणी अफ्रीका के **केपटाऊन** शहर का स्लम क्षेत्र चौथे क्रम पर है। इस स्लम वाली मलिन बस्ती में **5 लाख** से ज्यादा लोग निवास करते हैं।

केनिया की राजधानी **नैरोबी** का '**किबेरा**' नामक स्लम अफ्रीका महाद्वीप का दूसरा सबसे बड़ा स्लम क्षेत्र है। इस मलिन बस्ती में **2 लाख लोग** रहते हैं। नैरोबी के इस स्लम के अनौपचारिक रूप से बसने पर इसका पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ा है जैसे विषय पर अध्ययन भी किया जाता रहा है। उल्लेखनीय है कि विश्व में पांचवें सबसे बड़े इस स्लम क्षेत्र में रहने वाले लोग सरकारी सहायता से सेनिटेशन का काम शुरू किए जाने से पहले '**फ्लाईंग-टॉयलेट**' का प्रयोग करते थे। नैरोबी के इस स्लम में बाथरूम के दो अर्थ होते थे। एक तो स्थानीय **पिट वाले शौचालय में जाना** या दूसरे **फ्लाईंग टॉयलेट** का उपयोग करना। पिट वाला शौचालय किसी आउट हाउस या झोपड़ी में बना होता था। वहां आसपास के लोग भी उसका उपयोग करते थे जबकि **फ्लाईंग टॉयलेट का अर्थ किसी प्लास्टिक की थैली में शौच विसर्जित करने के उपरान्त जब उपयोगकर्त्ता उसे दूर गली में फेंक देता था तो इसे सामान्यतः फ्लाईंग टॉयलेट ही कहा जाता था**। इससे यहां पर संक्रमण और भारी प्रदूषण फैलता था जिससे इन लोगों में आंर्तशोध, टायफाइड और टी.बी. जैसी बीमारियां फैलती रहती थी।

विश्व में जितने भी स्लम क्षेत्र है, उनका विकास बेतरतीब तरीके से ही हुआ है। यही वजह है कि दुनिया के अनेक शहरों में फैले इन स्लम क्षेत्रों में कहीं पर **आग लगने** से तो कहीं **महामारियों के फैलने** से लोगों की जानें चली जाती हैं। हाल ही में मई, 2014 में दिल्ली के एक स्लम में आग लगने से दो बच्चे जलकर राख हो गए, जबकि बहुत से बच्चे आग में झुलसकर स्थानीय अस्पतालों में उपचाराधीन हैं। भारत में ऐसी हृदयविदारक घटनाएं रोजाना होती हैं। **बांग्लादेश** की राजधानी **ढाका** में भी एक स्लम में आग लगने से गत वर्ष 11 लोगों की मृत्यु हो गई थी। मारे गए व्यक्तियों में सभी महिलाएं और बच्चे थे।

हमारे आधुनिक समाज का साधारण आमदनी वाला मध्यम वर्गीय तबका झोपड़पट्टियों एवं गंदी बस्तियों को एक **जहरीले सामाजिक रोग** की तरह देखता है जबकि पुलिस उन्हें कानून और व्यवस्था का **खुला उल्लंघन करने वालों** के रूप में। नगर निगमों एवं नगरपरिषदों की नज़र में ये असली जायदाद के **नाजायज़ उपभोक्ता** हैं, जबकि नगर योजनाकार उन्हें शहरी भूमि पर **उभरे फोड़े** की तरह मानते हैं। भारत के ज्यादातर राजनेता और उनकी पार्टियां इन्हें अपना **वोट बैंक** तो समझती हैं, लेकिन उनके सुधार के लिए कोरे वायदों के अलावा उनके पास उन्हें देने के लिए कुछ भी नहीं हैं। यह

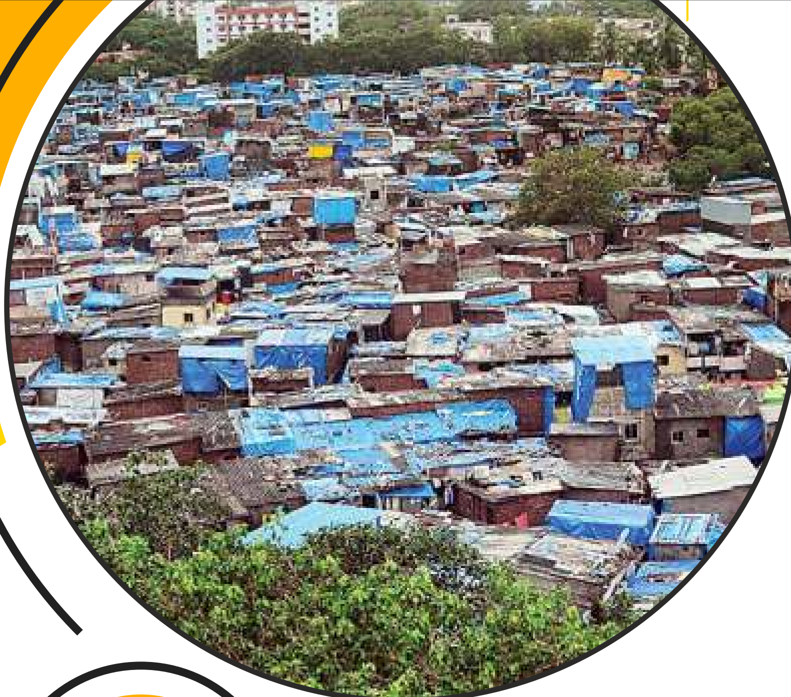

अलग बात है कि कुछ नेता अपने फायदे के लिए कुछ अवैध कॉलोनियों को नियमित भी करवा देते हैं परन्तु ऐसी अवैध कॉलोनियां झोपड़पट्टियों से बिल्कुल भिन्न होती हैं। दिल्ली में नियमित की गई हजारों अवैध कॉलोनियां झोपड़पट्टियों से भिन्न थीं।

हरेक प्रकार के प्रदूषण से ग्रस्त मलिन बस्तियों तथा झुग्गी-झोपड़ियों का विस्तार भारतीय शहरों में तेजी से हो रहा है। ये बस्तियां अनाधिकृत तो होती ही हैं, अब तो उनके क्षेत्रफल में भी लगातार वृद्धि हो रही है। असल में तो ये गंदी बस्तियां गांव-देहात की घोर उपेक्षा का ही परिणाम हैं क्योंकि जब ग्रामीण लोगों के आसपास रोजी-रोटी का जुगाड़ नहीं बैठता है, तब वे उसकी खोज में लाचार शहर की ओर रूख करते हैं, क्योंकि देश के शहरों और कस्बों में रोजगार के अनेक अवसर उपलब्ध हैं और उन्हें वहां काम मिलने की भी उम्मीद होती है। महानगरों और मध्यम स्तर के शहरों की तेजी से बढ़ती आबादी इसी बुनियादी तथ्य का ही प्रमाण है।

महाराष्ट्र एवं गुजरात जैसे एकाध राज्य को छोड़ कर शेष भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनता आज भी गांवों में ही रहती है। परन्तु, हमारे राजनेताओं एवं अफसरों के स्वार्थ के चलते गांवों के आधारभूत ढांचे में वृद्धि होने की अपेक्षा वह ढहता ही जा रहा है। परिणामस्वरूप, गांवों में रोजगार के अवसर लगभग समाप्त हो गए हैं। यही वजह है कि विगत 6 दशकों से गांवों के लोगों का शहरों की ओर तेजी से पलायन जारी है। रोजी-रोटी कमाने के लिए गांवों के बहुत से लोग बड़ी संख्या में शहरों में बस रहे हैं। जिन लोगों के सामने गांव छोड़ने की ऐसी कोई मजबूरी नहीं भी है, वे भी शहरों की तड़क भड़क से प्रभावित होकर गांव छोड़कर शहरों में बस रहे हैं।

गांवों से शहरों में आते ही ये लोग तुरन्त काम तलाशते हैं। किसी को फैक्ट्री में, तो किसी को दैनिक दिहाड़ीदार के तौर पर नौकरी मिल जाती है। जिन्हें नौकरी नहीं मिलती है, वे फलों व सब्जियों या खाने-पीने के विविध सामान की रेहड़ी आदि लगा लेते हैं। कुछ तो रिक्शा या टैम्पू चलाने का काम भी कर लेते हैं। गांवों से दूर होने के कारण उनमें परिश्रम वाले तरह-तरह के काम करने की झिझक भी समाप्त हो जाती है जबकि गांव में वे ज्यादा परिश्रम वाले और उस काम को बिल्कुल भी नहीं करते हैं जो उनकी खोखली प्रतिष्ठा के अनुकूल न हो। लिहाजा, अब गांवों में उनके लायक काम ही नहीं बचे हैं।

गांवों में झूठी शान, अहम् एवं खोखली प्रतिष्ठा यहां के लोगों विशेषकर युवा वर्ग के काम में बाधा बनी रहती है। गांवों में आजकल के युवकों को मेहनत का काम करने में शर्म व लज्जा भी आती है। दूसरी ओर, मलिन बस्तियों और झोपड़पट्टियों में रहने वालों में किसी तरह की झिझक नहीं मिलती है जबकि उनकी साक्षरता दर ग्रामीण भारत की साक्षरता दर से ज्यादा है। शहर में रहने के कारण यहां उन्हें रोजगार भी उपलब्ध हैं, जबकि गांवों में लोगों को कई कई महीनों तक काम नहीं मिलता है। यही वजह है कि महानगरों और मध्यम दर्जे के शहरों में ग्रामीण लोग खिंचे चले आ रहे हैं।

शहरों में चूंकि उनकी अपनी कोई जमीन-जायदाद या प्लाट आदि तो होता नहीं है, लिहाजा वे भी किसी सार्वजनिक जमीन पर अपनी झुग्गी-झोपड़ी डाल लेते हैं और इस तरह वहां झोपड़पट्टियों और अवैध मलिन कालोनियों की बाढ़ सी आ जाती है। इससे शहरों के जरूरी और मौलिक जन सुविधाओं के संसाधन चरमराकर धराशाही होने की कगार पर पहुंच जाते हैं। पलायन करके शहरों में पहुंचे ग्रामीण वहां के चरमराते आधारभूत ढांचे को तो खोखला कर ही देते हैं, वे स्वयं भी मौलिक जनसुविधाओं के अभाव में कीड़े-मकौड़ों का सा जीवन जीने पर मजबूर हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत के गांवों की उन्नति होने से ही इस देश की उन्नति होगी। उन्होंने इसीलिए **देशी कला-कौशल, कुटीर उद्योग** और **ग्रामीण शिल्प** को बढ़ावा देने पर जोर दिया था। परन्तु, देश के कर्णधारों के एजेंडे में ग्रामीण-विकास कहीं पर भी नहीं था, लिहाजा, उन्होंने गांवों को पूर्णतः बिसार ही दिया था। इसी तरह ग्रामीण शिल्प और वहां की कला कौशल

भी उपेक्षित कर दी गई। ग्राम वासियों से राजनेताओं ने बस इतना संपर्क अवश्य रखा कि चुनाव के समय वे उन्हें थोड़ा सा प्रलोभन देकर उनके वोट हथियाते रहे जबकि गांवों के विकास के लिए बनाई गई योजनाएं भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ती रही। इससे गांवों का आधारभूत ढांचा ढहता चला गया और धीरे धीरे वहां से लोग शहरों की ओर पलायन करते रहे।

ग्रामीण क्षेत्र की उपेक्षा तथा उसके फलस्वरूप वहां से नगरों की ओर आने वालों की दुर्दशाग्रस्त नियति को उजागर करने वाले ढेरों आंकड़े दिए जा सकते हैं। परन्तु, शहरों में स्लम केवल ग्रामीण गरीबी के कारण ही नहीं खड़े हो रहे हैं, बल्कि कई क्षेत्रों में सरकार द्वारा विस्थापित किए जाने की वजह से भी वहां के स्थानीय लोगों को गांवों से पलायन करना पड़ा है। आम आदमी के जीवन-स्तर को सुधारने कि लिए सरकार जिस तथाकथित वैज्ञानिक विकल्प का सहारा लेती है, उसी का नतीजा यह होता है कि अधिकाधिक तादाद में लोग ऐसी जिन्दगी गुजारने के लिए बाध्य किए जाते हैं जो अमानवीय होता है। साफ पानी, बेहतर पोषण और सिर छुपाने के लिए छप्पर जैसी बुनियादी जरूरतों की ओर ध्यान देने की बजाए कथित विकास की बाहरी टिमटाम हासिल करना ही मानों हमारा लक्ष्य बन गया है। इसी का नतीजा है कि गन्दी बस्तियों का तेजी से फैलाव हो रहा है।

हमारे नगरों के लिए बनाए गए **मास्टर प्लानों** में तो सेवा-कर्मियों के लिए भी स्थान आरक्षित नहीं किए गए हैं। लिहाजा, विवश होकर गरीब लोग जहां भी खाली भूमि मिलती है उस पर झुग्गी बनाकर रहना शुरू कर देते हैं। इन झुग्गी-झोपड़ियों में न तो पेयजल की व्यवस्था होती है और न ही सफाई का बंदोबस्त। वहां प्रकाश जैसी अन्य जनसुविधाएं तो पूर्ण रूप से नदारद ही होती हैं। देश के सर्वाधिक सुन्दर एवं नियोजित शहर **चण्डीगढ़** में भी मलिन बस्तियां व झुग्गी-झोपड़ियां तेजी से विकसित हुई हैं। इन पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि इन में निम्न आय वर्ग के वे लोग रहते हैं जो यहां पर या तो विभिन्न सरकारी दफ्तरों में कार्यरत हैं अथवा किसी निर्माण कार्य में लगे हुए हैं। चण्डीगढ़ के निर्माता एवं विश्व प्रसिद्ध वास्तुकार **'ला कारबूजिये'** ने शहर का नियोजन तो बेहतर तरीके से किया था, परन्तु संभवतः उसमें वे निम्न-मध्यमवर्गीय परिवारों के लिए आवासीय क्षेत्र सम्मिलित करना भूल गए। यही वजह है कि चण्डीगढ़ में कई **रेहड़ी-मार्किट** और **झोपड़पट्टी वाली मलिन बस्तियों** का उदय हुआ है। गौरतलब है कि चण्डीगढ़ को बसे मात्र 65 वर्ष ही हुए हैं जबकि यहां पर **3.50 लाख** लोग स्लम क्षेत्र बना कर रहते हैं।

सामान्यतया गंदी बस्तियों में अपनी सेवा प्रदान करने वाले **ड्राईवर, सहचालक, राज-मजदूर, घरेलू नौकर, आया, सब्जी बेचने वाले छोटे दुकानदार** आदि ही ज्यादा बसे हुए हैं। मुम्बई और कोलकाता के स्लम में तो निम्न मध्य वर्ग के लोग भी रहने पर मजबूर हैं। देश की राजधानी दिल्ली स्लम आबादी के लिहाज से दूसरे नम्बर पर है। यहां पर **36 लाख** व्यक्ति झोपड़पट्टियों एवं स्लम क्षेत्र में रहते हैं। उससे पहले देश की आर्थिक राजधानी मुम्बई का नम्बर है। वहां पर लगभग **90 लाख** लोग स्लम बस्तियों में रहते हैं। इनके बाद **कोलकाता, चेन्नई, हैदाराबाद, पूणे, अहमदाबाद, बैंगलोर, कानपुर, मदुरई, कोयम्बटूर, कोचीन, पटना** व **फरीदाबाद** आदि शहरों का नम्बर है।

हमारे औद्योगिक शहरों में कामगारों की स्थिति भी कमोबेश ऐसी ही होती है जैसी कि स्लम में रहने वालों की है। **पानीपत** व **लुधियाना** जैसे शहरों को एक उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। पानीपत के हथकरघा उद्योग में कार्यरत अधिकांश **बुनकर** और **उनके परिवार, रंगरेज** व **उनके बच्चे, चरखा चलाकर नालियां** व **गोटियां भरने वाली महिलाएं, ताना मास्टर और सुपरवाईजर** आदि विविध कामगारों को फैक्ट्रियों के आहते में बनी दड़बेनुमा कोठरियों में ही कीड़े-मकोड़ों की मांनिन्द रहना पड़ता है। यहां के कंबल एवं सौडी यार्न के कारखानों में कार्यरत मजदूरों के रहने

वाली परिस्थितियां बहुत खराब हैं। यहां बुनकरों के लिए बनाई गई कॉलोनियां किसी भी लिहाज से मलिन बस्तियों और अवैध झोपड़पट्टियों से बेहतर नहीं हैं।

जानकारों का कहना है कि सरकार पहले तो गंदी बस्तियों को हटाने के लिए उनके उन्मूलन अर्थात् उनको उजाड़ने पर विचार कर रही थी, लेकिन अब इनके पर्यावरण सुधार की ही योजना बनाई हुई है। अब **'जवाहर लाल नेहरू अर्बन रिन्यूवल मिशन'** के तहत देश के **63 नगरों** को सुधारने एवं उनको सुन्दर बनाने का काम चल रहा है, जिस पर अनुमानतः **कई लाख करोड़** रुपया खर्च भी किया जा चुका है, परन्तु अभी तक शहरी गंदी बस्तियों की पर्यावरण सुधार योजना में सफाई, जलापूर्ति और स्वास्थ्य सेवाएं तक असंतोषजनक हैं। देश के नगरों की मौजूदा विकास दर को देखते हुए सन् 2020 ई. तक तो गंदी बस्तियों की स्थिति और भी बिगड़ जाने की आशंका है।

मलिन एवं गंदी बस्तियों को गिराकर उस जमीन का उपयोग किसी लाभकारी विकास योजना के लिए करना आर्थिक रूप से फायदेमंद हो सकता है। **करनाल** की एक मौजूदा संभ्रांत कॉलोनी **'न्यायपुरी'** को यहां पहले से विद्यमान एक झुग्गी-झोपड़ी कलस्टर को उजाड़ कर ही बसाया गया था। पूर्व केन्द्रीय शहरी विकास मंत्री श्री जगमोहन के नेतृत्व में दिल्ली में झोपड़पट्टी उन्मूलन अभियान में जिन क्षेत्रों को खाली करवाया गया था, वे बहुत ही बेशकीमती तो हैं ही, व्यापारिक दृष्टि से उन की स्थिति सर्वोत्तम भी है। परन्तु, इसके विपरीत सच्चाई यह भी है कि ऐसी बस्तियों को उजाड़ने से विस्थापित हुए गरीबों का जीवन और भी ज्यादा खराब हो जाता है, क्योंकि ऐसी बस्तियों में पनपे उनके **सामाजिक** और **आर्थिक सम्बन्ध** अस्त-व्यस्त हो जाते हैं। वैसे, भारत में गंदी बस्तियों को उजाड़ कर वहां रहने वाले लोगों को कहीं और बसाने की योजनाएं अब तक तो पूर्णतः असफल रही हैं। इसके मुख्यतः दो कारण हैं। एक तो बस्तियां उजाड़ कर जब उनको दूसरे स्थान पर ले जाया जाता है तो वहां पर न तो **रोजगार के साधन** मुहैया कराये जाते हैं और न ही **'सामाजिक-दायित्व'** समझ कर उन्हें नये माहौल में रहने के लिए प्रेरित एवं प्रशिक्षित ही किया जाता है। दूसरे, ऐसी बस्तियों में कुछ भू-माफिया तत्त्व घुस आये हैं जो सरकारी जमीन पर झोपड़पट्टियां खड़ी करके उनकी एवज में पुनर्वास परियोजनाओं में अपना स्थान पक्का करने के जुगाड़ में रहते हैं। ये असामाजिक तत्त्व पुनर्वास स्कीमों के तहत मिले प्लाटों को बेचकर फिर दूसरी जगहों पर झोपड़पट्टी खड़ी करवा लेते हैं।

देश के **सर्वोच्च न्यायालय** ने दिल्ली में सरकारी भूमि पर अतिक्रमण करके झोपड़पट्टी बसाने के खिलाफ 16 फरवरी, 1998 को एक महत्त्वपूर्ण फैसला सुनाया था। उक्त निर्णय में **माननीय न्यायमूर्ति श्री बी.के. किरपाल** ने कहा था कि **'स्लम या झोपड़पट्टी बसाना अब एक नियमित एवं फलता फूलता कारोबार बन चुका है। अतः केन्द्रीय एवं दिल्ली सरकार, दिल्ली नगर निगम, नई दिल्ली नगर परिषद्, दिल्ली विकास प्राधिकरण और रेलवे को आदेश दिया जाता है कि भविष्य में वे किसी भी सरकारी भूमि पर अतिक्रमण न होने दें तथा सरकार यह सुनिश्चित करे कि सरकारी जमीन पर किसी झोपड़पट्टी का निर्माण न हो सके।**

माननीय न्यायाधीश ने इसी निर्णय में कहा था कि जब बहुत से व्यक्ति अवैध कॉलोनी बनाकर रहते हों तो वहां सफाई एवं स्वास्थ्य संबंधित अनेक समस्याएं खड़ी हो जाती हैं। न्यायालय का दृष्टिकोण था कि **स्लम बनाना एक घिनौना व्यापार बन चुका है जिसे संगठित तरीके से चलाया जा रहा है।** स्लम या झोपड़पट्टी में रहने वालों को झुग्गी के बदले अन्यत्र जमीन आबंटित करने की स्कीम पर न्यायालय का कहना था कि **कब्जेबाजों को दूसरी जगहों पर बसाने का निर्णय एकदम से वैसा ही है जैसे किसी जेबकतरे को पुरस्कृत करना क्योंकि ऐसे लोग टैक्स देने वाले अच्छे नागरिकों के हितों पर कुठाराघात करके ही अतिक्रमण करते हैं।** सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली नगर निगम पर

कड़ा कटाक्ष करते हुए कहा था कि **गंदगी को झेलना और नाकारा कर्मियों को सहन करना कहां का प्रशासन है?** उल्लेखनीय है कि दिल्ली में स्लम अर्थात् झोपड़पट्टियों की संख्या तेज़ी से बढ़ रही है। यहां इस वक्त लगभग 900 स्लम-कलस्टर हैं जिन में लगभग 5 लाख झुग्गी हैं और वहां 36 लाख से ज्यादा लोग रहते हैं। 12 वर्ष पहले यहां केवल 2.5 लाख झुग्गी थीं जिन में मात्र 13 लाख लोग रहते थे। जानकारों का मानना है कि दिल्ली में प्रत्येक वर्ष 6 लाख लोग काम की तलाश में आते हैं जिस से स्लम-कलस्टरों का विस्तार हो रहा है। जिस रफ्तार से ये बढ़ रहे हैं उससे तो ऐसा लगता कि यहां की **हरित-पट्टियों** को भी ये लील लेंगे।

कुछ समाज शास्त्रियों का यह मत था कि झोपड़पट्टियों को उखाड़ने की अपेक्षा इन को ही सुधारा जाए। यहां सामूहिक नल लगाने, साफ-सफाई का इंतजाम करने, पक्की और ढकी नालियां बनाने और बिजली मुहैया कराने जैसी बुनियादी जरूरतें जुटाई जानी चाहिए। भारत सरकार का रूख यद्यपि इसके अनुकूल नहीं था; क्योंकि ये बस्तियां प्रायः शहर के मुख्य अधिकृत इलाकों में बनी हुई हैं। परन्तु, सरकार ने अब इस योजना को मान लिया है और देश के 10 लाख या इससे ज्यादा आबादी वाले 63 शहरों की गंदी बस्तियां एवं झोपड़पट्टियों को अब सुधारा जा रहा है।

हमारा अपना मत है कि सरकारी लापरवाही के चलते हम स्वयं देश के नगरीय रहन-सहन को बद से बदतर बना रहे हैं। वस्तुतः जब तक भारत की अर्थनीति की प्राथमिकताओं में समुचित परिवर्तन नहीं होगा तथा ग्रामीण विकास और वहां के मौलिक आधारभूत ढांचे को सुदृढ़ नहीं किया जाता है, तब तक गंदी बस्तियों, झुग्गी-झोपड़ियों, अनाधिकृत निर्माणों और अतिक्रमण का कोई ठोस इलाज संभव नहीं है।

देश में फिलहाल **3 करोड़** से ज्यादा घरों की कमी है जबकि भविष्य में यह आंकड़ा इससे कहीं ज्यादा बढ़ेगा। आवास की सबसे ज्यादा कमी शहरों में है और सर्वाधिक कमी **निम्न वर्ग श्रेणी** के लोगों के लिए है। आवास की इस कमी को पाटने के लिए इस क्षेत्र में कम से कम **4,50,000 करोड़** रुपये **'सामाजिक रहन-सहन'** की योजना अर्थात् सस्ते एवं छोटे घरों के निर्माण के क्षेत्र में निवेश करने होंगे जबकि इससे भी ज्यादा पूंजी **5,50,000 करोड़** इन आवासीय मकानों के लिए जरूरी आधारभूत ढांचे को खड़ा करने पर खर्च होगा। **केन्द्रीय पब्लिक हैल्थ इंजिनियरिंग आर्गेनाईजेशन** ने भी शहरी रहन-सहन को बेहतर बनाने के लिए प्रत्येक वर्ष **50,000 करोड़** रुपये खर्च करने का सुझाव दिया है। एक अन्य सरकारी एजेंसी ने देश के शहरी आधारभूत ढांचे- पेयजल एवं सेनीटेशन के लिए सन् 2021 तक **2,25,000 करोड़** रुपये तथा एक लाख से ज्यादा आबादी वाले शहरों में यातायात सुविधाएं विकसित करने के लिए आगामी 20 वर्षों में **5,00,000** करोड़ रुपये खर्च करने का आंकड़ा दिया है।

परन्तु, उक्त निर्माण करने के लिए इतने बड़े काम की ओर न तो कोई प्राइवेट उद्यमी और न ही कोई राज्य सरकार तत्पर दीखती हैं। सस्ते आवासों के निर्माण के क्षेत्र की ओर आकर्षित न होने के हमें मुख्यतः दो कारण नजर आ रहे हैं। एक तो, शहरी भूमि बहुत महंगी हो गई है। दूसरे, उद्यमियों के पास फिलहाल भवन निर्माण की कोई सस्ती व टिकाऊ प्रौद्योगिकी भी नहीं है। प्राईवेट बिल्डरों ने तो सब से पहले अपना मुनाफा देखना होता है। इसीलिए, वे यदि महंगी जमीन लेकर वहां बिल्डिंगे भी बना लेते हैं तो वे उसमें पहले अपना मुनाफा रखकर उन्हें अमीरों को ही बेच देते हैं। उन्हें **सामाजिक दायित्व** से कुछ भी लेना देना नहीं है। सरकार भी संभवतः धनाभाव के चलते शहरी आवास की इसी कल्याणकारी योजनाओं को स्वयं नहीं ले रही है। भारत की कुल आबादी की लगभग 18 प्रतिशत आबादी शहरी स्लम में रह रही है और यदि प्राईवेट बिल्डरों को सामाजिक दायित्व के इस काम पर लगाना है तो सरकार को उन्हें भी सब्सिडी, टैक्सों में छूट एवं कम ब्याज पर ऋण आदि की सुविधाएं देनी ही पड़ेंगी। तब संभवतः हो सकता है कि वे इस क्षेत्र में काम करने के लिए तैयार हो जाए

SAATVIK™
GREEN
ENERGY

SOLAR POWERED INDIA

Powering cities across India to get closer to the dream of clean energy

A great source of cost effective power, solar energy is one of the best solutions for powering regions of India, far and wide to support livelihoods and businesses.

Extended wind and snow load tests

System output maximized by reducing mismatch losses

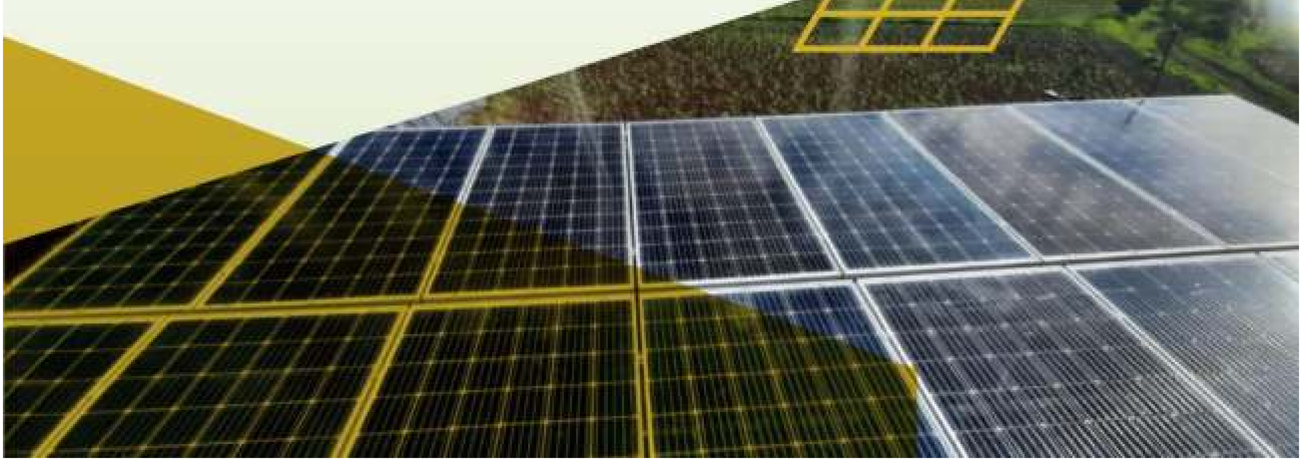

बलराज सिंह अहलावत

उन्नत प्रौद्यौगिकी अपना कर गोबर से प्राप्त की जा सकती है आर्थिक क्रांन्ति

पशुधन के गोबर से मिली मीथेन गैस को ईंधन तेल की जगह प्रयोग में लाया जा सकता है। हालांकि ऐसा ही एक कारनामा गोरखपुर स्थित 'श्री गोविंद गौशाला' के संस्थापक ट्रस्टी श्री प्रहलाद ब्रह्मचारी ने किया था, जिन्होंने अपने सहयोगियों की मदद एवं अपनी अथक लगन से गोबर गैस से कार्बन डाइ ऑक्साइड और मीथेन को अलग करके मीथेन की बॉटलिंग प्रणाली भी विकसित की थी।

गोबर-गैस में लगभग 65 प्रतिशत मीथेन, 34 प्रतिशत कार्बन-डाइ-ऑक्साइड और 1 प्रतिशत हाइड्रोजन सल्फाइड होती है। इन गैसों को रसायनिक विधि से अलग-अलग करना संभव हो सकता है। परन्तु श्री ब्रह्मचारी ने क्रायोजेनिक सुपर कूलिंग प्रणाली अपनाई जिससे मीथेन तो अलग हो ही गई, कार्बन-डाइ-ऑक्साइड जम कर ड्राई आईस के रूप में निकली। ड्राइ आईस का रेफ्रीजरेशन में व्यावसायिक और दूसरे कई बहुआयामी कामों में उपयोग संभव है जबकि मीथेन से कार और थ्री-व्हीलर तक चलाए जा सकते हैं।

गोबर गैस से मीथेन और कार्बन डाइ ऑक्साइड को अलग करने के पश्चात् यदि मीथेन की बॉटलिंग विकसित कर ली जाए तो गोबर से एक आर्थिक-क्रांति संभव है। इससे न केवल देश की अर्थव्यवस्था की तस्वीर बदल सकती है बल्कि गाय व भैंस जैसे पशुओं से देहात में भी पूर्ण विकास संभव है। पशुधन के गोबर से मिली मीथेन गैस को ईंधन तेल की जगह प्रयोग में लाया जा सकता है। हालांकि ऐसा ही एक कारनामा गोरखपुर स्थित 'श्री गोविंद गौशाला' के संस्थापक ट्रस्टी श्री प्रहलाद ब्रह्मचारी ने किया था, जिन्होंने अपने सहयोगियों की मदद एवं अपनी अथक लगन से गोबर गैस से कार्बन डाइ ऑक्साइड और मीथेन को अलग करके मीथेन की बॉटलिंग प्रणाली भी विकसित की थी।

गोबर-गैस में लगभग 65 प्रतिशत मीथेन, 34 प्रतिशत कार्बन-डाइ-ऑक्साइड और 1 प्रतिशत हाइड्रोजन सल्फाइड होती है। इन गैसों को रसायनिक विधि से अलग-अलग करना संभव हो सकता है। परन्तु श्री ब्रह्मचारी ने क्रायोजेनिक सुपर कूलिंग प्रणाली अपनाई जिससे मीथेन तो अलग हो ही गई, कार्बन-डाइ-ऑक्साइड जम कर ड्राई आईस के रूप में निकली। ड्राइ आईस का रेफ्रीजरेशन में व्यावसायिक और दूसरे कई बहुआयामी कामों में उपयोग संभव है जबकि मीथेन से कार और थ्री-व्हीलर तक चलाए जा सकते हैं। श्री ब्रह्मचारी अपनी विकसित की गई विधि से मीथेन गैस को सिलेण्डर में भर कर प्रयोग में लाते रहे हैं। बॉटलिंग की इस प्रक्रिया में 5 रु. प्रति किलोग्राम की दर से खर्च आया था जिसे बड़े एवं उन्नत संयंत्र लगा कर कम किया जा सकता है।

श्री ब्रह्मचारी का कहना है कि एक सामान्य सी गाय साल भर में इतना गोबर दे देती है कि उससे तैयार होने वाली मीथेन गैस 225 लीटर पेट्रोल के बराबर हो सकती है। भारत में लगभग 25 करोड़ गाय और भैंसें मौजूद हैं। जाहिर है, उनके गोबर से 15 करोड़ लीटर पेट्रोल

गोबर गैस से मीथेन तैयार किए जाने संबंधी पुष्टि पशु आनुवंशिकी संसाधन ब्यूरो, करनाल की सर्वे टीम के वैज्ञानिकों द्वारा भी की जा चुकी है। सर्वे टीम के अनुसार गोबर गैस से मीथेन गैस बनाने संबंधी संयंत्र श्री गोविंद गौशाला, गोरखपुर के संस्थापक ट्रस्टी श्री प्रहलाद ब्रह्मचारी ने तैयार किया है। अपने प्रयोग के बाद ब्रह्मचारी श्री प्रहलाद ने साबित कर दिया है कि गोबर गैस प्लांट से मीथेन व कार्बन-डाइ-ऑक्साइड गैस तैयार की जा सकती है।

के बराबर मीथेन गैस मिल सकती है। याद रहे, मीथेन गैस एल.पी.जी. और सी.एन.जी. का विकल्प तो है ही, यह प्रदूषण मुक्त होने के साथ-साथ ऊर्जा का बढ़िया स्रोत भी है। गोबर-गैस संयंत्रों के द्वारा गोबर से बढ़िया खाद मिल ही सकती है और इससे अरबों रुपये की ड्राइ आईस भी मिल सकती है।

ब्रह्मचारी श्री गोविंद का कहना है कि गोबर में ग्रामीण अर्थव्यवस्था की क्रान्ति का बीज छुपा हुआ है क्योंकि गोबर गैस से अब मोटरसाइकिलें, थ्री-व्हीलर व कारें भी चलाई जा सकती हैं। यह इसलिए संभव हो सका है क्योंकि अब उन्होंने गोबर से मीथेन गैस बनाने में महारथ हासिल कर ली गई है। गोबर से मीथेन गैस बनाने पर न केवल पशुपालकों व किसानों को आर्थिक लाभ होगा, बल्कि उन्हें रोजगार के अतिरिक्त संसाधन भी प्राप्त होंगे। वह दिन दूर नहीं जब गोबर की व्यावसायिक बिक्री होगी और गाय-भैंस कामधेनू बन जाएंगी। गोबर गैस से मीथेन तैयार किए जाने संबंधी पुष्टि पशु आनुवंशिकी संसाधन ब्यूरो, करनाल की सर्वे टीम के वैज्ञानिकों द्वारा भी की जा चुकी है। सर्वे टीम के अनुसार गोबर गैस से मीथेन गैस बनाने संबंधी संयंत्र श्री गोविंद गौशाला, गोरखपुर के संस्थापक ट्रस्टी श्री प्रहलाद ब्रह्मचारी ने तैयार किया है। अपने प्रयोग के बाद ब्रह्मचारी श्री प्रहलाद ने साबित कर दिया है कि गोबर गैस प्लांट से मीथेन व कार्बन-डाइ-ऑक्साइड गैस तैयार की जा सकती है। एन.बी.ए.जी.आर. की सर्वे टीम के वैज्ञानिकों के अनुसार जिन पशुपालकों व किसानों ने गोबर गैस प्लांट स्थापित किए हैं, वे भी इसी तरह से मीथेन व कार्बन डाई ऑक्साइड गैस तैयार कर आर्थिक लाभ कमा सकते हैं। कम खर्च में ही गोबर गैस से इन दोनों गैसों को बनाया जा सकता है।

एन.बी.ए.जी.आर., करनाल के वैज्ञानिक डॉ. डी.के. सडाना के अनुसार गोबर गैस प्लांट से जहां खेती के लिए अच्छी खाद प्राप्त

ऊर्जा के इस गैर परम्परागत संसाधन से पैट्रोल की बढ़ रही कीमतों से निजात मिलेगी। गोबर गैस से मीथेन की भान्ति कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस को भी अलग कर लिया गया है। इस गैस को तरल या ठोस बनाकर उसका कई उद्योगों में प्रयोग किया जा सकता है। इन वैज्ञानिकों के अनुसार गोबर गैस प्लांट लगाने से जहां पशुपालकों व किसानों को खेती के लिए अच्छी खाद व गोबर गैस मिलेगी, वहीं वे इस गैस से मीथेन व कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस बनाकर आर्थिक लाभ कमा सकते

होती है, वहीं घरेलू काम के लिए गैस भी प्राप्त होती है। इस गैस से रात के समय रोशनी भी ली जा सकती है और इसे भोजन बनाने के काम में भी प्रयोग किया जा सकता है। इसके साथ ही अब गोबर गैस से पशुपालक व किसान मीथेन गैस अलग कर सकते हैं। डॉ. सडाना के अनुसार मीथेन गैस को सिलेण्डरों में भरने के बाद उससे मोटरसाइकिल, थ्री-व्हीलर और कार तक को चलाया जा सकता है। मीथेन गैस से वाहन चलाने से एक तो ईंधन तेल की बचत होगी और दूसरे सड़कों पर प्रदूषण भी कम होगा। ऊर्जा के इस गैर परम्परागत संसाधन से पैट्रोल की बढ़ रही कीमतों से निजात मिलेगी। गोबर गैस से मीथेन की भान्ति कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस को भी अलग कर लिया गया है। इस गैस को तरल या ठोस बनाकर उसका कई उद्योगों में प्रयोग किया जा सकता है। इन वैज्ञानिकों के अनुसार गोबर गैस प्लांट लगाने से जहां पशुपालकों व किसानों को खेती के लिए अच्छी खाद व गोबर गैस मिलेगी, वहीं वे इस गैस से मीथेन व कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस बनाकर आर्थिक लाभ कमा सकते

Save Environment

Riviera Home Furnishings Pvt. Ltd.

Plot No. 235-37, Sector 29, (Part-2), Panipat - 132103 Haryana India

Tel.: 91 180 6621200

Email: riviera@revieratex.com | Website: www.rivierahome.in

Regd. Office :

Unit No. 981, 9th Floor, Aggarwal Cyber Plaza-II, Netaji Subhash Place, Pitampura

Delhi North West 1100034

Tel.: 011-40106566

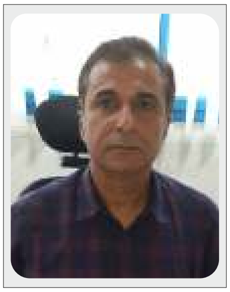

सतिंदर पाल सिंह बांगड़

बिल गेट्स फाउंडेशन के सहयोग से विकसित की जा रही है सुरक्षित एवं किफायती शौचालयों की प्रौद्योगिकी

भारत सहित विश्व के विकासशील देशों में बेहतर सफाई व्यवस्था की बहुत जरूरत है। पर्याप्त शौचालयों एवं बुनियादी स्वच्छता की सुविधाओं की कमी के चलते विश्व के लगभग **2.6 अरब लोग** अर्थात् दुनिया की 40 प्रतिशत आबादी खुले में शौच करती है, जिसका मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर विनाशकारी प्रभाव पड़ रहा है। शहरी क्षेत्रों में भी जहां घरेलू और सामुदायिक शौचालयों का प्रचलन ज्यादा है, में से लगभग 2.1 अरब लोगों के शौचालय उन **सेप्टिक टेंकों** से जुड़े हुए हैं, जिनका **निस्त्राव संरक्षित नहीं है** अथवा उन सेप्टिक टैंकों से सम्बंधित हैं जिनका **मल-जल सीधे खुली नालियों या भू-जल में डिस्चार्ज किया जा रहा है।**

घटिया साफ-सफाई एवं स्वच्छता के अभाव में प्रत्येक वर्ष विश्व के **7,00,000 से ज्यादा बच्चे** डायरिया जैसे जानलेवा रोग से मारे जाते हैं। लम्बे समय तक डायरिया से पीड़ित रहने वाले बच्चों में डायरिया जीवन रक्षा के लिए आवश्यक पोषक तत्त्वों को उनके शरीर में अवशोषित होने से रोकता है तथा यह जीवन रक्षक टीकों के प्रभाव को भी क्षीण कर देता है, जिससे ऐसे बच्चों का विकास स्वतः ही अवरूद्ध हो जाता है और वे काल के गाल में समा जाते हैं। बुनियादी स्वच्छता न हो तो समाज के अन्य लोग भी प्रभावित होते हैं, जिससे लोगों में काम करने एवं उत्पादकता की क्षमता घट जाती है और इस तरह देश का विकास भी अवरूद्ध हो जाता है।

विकासशील देशों में स्वच्छता के बुनियादी ढांचे का निर्माण तथा सभी लोगों के काम आने वाली सार्वजनिक जन-सेवाओं तथा रोजाना उत्पन्न होने वाले कचरे को लोगों के रहने के परिवेश से बाहर रखना आज एक बड़ी चुनौती है। विकसित देशों में इस्तेमाल किए जा रहे शौचालयों, सीवरों और मल-जल जैसे अपशिष्ट को उपचारित करने की प्रणालियों के लिए बहुत ही विस्तृत भूमि, ऊर्जा और पानी की जरूरत होती है। उनके निर्माण, संचालन और सतत रूप से कार्यरत रखना बहुत ही महंगा काम है, जोकि विकासशील देशों के लिए मुमकिन ही नहीं है। इन देशों के लिए मौजूदा कम महंगे विकल्प भले ही आकर्षक लगते हों, परंतु इनसे रोग उत्पन्न करने वाले पैथाजीन्स समाप्त नहीं होते हैं और न ही इनका डिजाइन व्यवहारिक होता है। ऐसे शौचालयों में बदबू भी लगातार बनी रहती है और ये कीट-पतंगों और मक्खियों इत्यादि को भी अपनी ओर आकर्षित करते हैं। इसीलिए इन देशों के लिए सस्ती, टिकाऊ और सुरक्षित तकनीकी की जरूरत है।

ऐसी तकनीकी को अपनाकर हम मानव अपशिष्ट का बेहतर एवं वैज्ञानिक तरीके से निपटान कर सकते हैं, प्रत्येक वर्ष मारे जाने वाले 7,00,000 बच्चों की जान बचा सकते हैं और उनके स्वास्थ्य में सुधार कर सकते हैं। विशेष रूप से **महिलाओं और लड़कियों** के लिए ऐसे शौचालय उनकी अधिक से अधिक **गरिमा, गोपनीयता** और **व्यक्तिगत सुरक्षा** को सुनिश्चित कर सकते हैं। बेहतर सफाई व्यवस्था से उत्पादकता भी बढ़ती है, स्वास्थ्य की देखभाल की लागत में कमी आती है और बीमारी, विकलांगता तथा असमय आने वाली मौतों पर भी रोक लगती है।

भारत जैसे विकासशील देशों में स्वच्छता सम्बंधित चुनौतियों से निपटने के लिए **मौलिक नवाचारों** और **तकनीकों** की बड़े पैमाने पर अपनाने की जरूरत है। ऐसे अभिनव प्रयोग एवं प्रौद्योगिकी विशेष रूप से उन घनी आबादी वाले क्षेत्रों, जहां बहुसंख्या अर्थात् करोड़ों की संख्या में लोग सघनता से रहते हैं तथा जो अपने अपशिष्ट का बिना किसी स्थाई एवं सुरक्षित निपटान की व्यवस्था के बिना ही संग्रह कर रहे हैं। ज्ञात हो, यह संग्रह वहां बने **सेप्टिक टैंकों** और **पिट वाले शौचालयों** में किया जा रहा है। शौचालयों के डिजाइन में अभिनव प्रौद्योगिकियों से सुधार करने के अतिरिक्त, मानव मल से लबरेज गड्ढों को खाली करने, उसके स्लज/अपशिष्ट को उपचारित करके नए तरीकों से उस कचरे को किसी लाभदायक उत्पाद का निर्माण करने से न केवल सरकारों एवं स्वच्छता सेवाप्रदाताओं को सार्वजनिक स्वच्छता जैसी चुनौती से

सामना करने में मदद मिलेगी, बल्कि अच्छे परिवेश के कारण लोगों का स्वास्थ्य भी सुधरेगा।

भारत सरकार ने हाल ही में केंद्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के तहत **जैव प्रौद्योगिकी विभाग** तथा **जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान परिषद** और अमेरिका के **बिल एण्ड मिलिंडा गेट्स फाउंडेशन** के साथ मिलकर देश में शौचालयों को सुधारने तथा स्वच्छता की बुनियादी प्रौद्योगिकी को विकसित करने के लिए एक अभिनव, सुरक्षित और किफायती परियोजना- '**रिइनवेंट द टॉयलेट चैलेंजः इंडिया**' नामक सहयोगात्मक प्रयास शुरू किया है। इस परियोजना के लिए 6 भारतीय वैज्ञानिकों का चयन किया गया है। भारत के लिए यह कार्यक्रम **गेट्स फॉउंडेशन** के वैश्विक '**रिइनवेंट द टॉयलेट चैलेंज**' के मॉडल पर आधारित है। इस कार्यक्रम पर जैव-प्रौद्योगिकी विभाग और गेट्स फॉउंडेशन ने संयुक्त रूप से **20 लाख अमेरिकी डॉलर** की पूंजी का निवेश किया है ताकि भारतीय वैज्ञानिक **अगली पीढ़ी के शौचालयों** के विकास और अनुसंधान को गति दे सकें।

जैव-प्रौद्योगिकी विभाग और गेट्स फॉउंडेशन ने इसी वर्ष मार्च, 2014 में दिल्ली में शौचालयों को सुधारने से सम्बंधित एक **प्रदर्शनी** का आयोजन किया था, जिसमें विश्व भर के 15 देशों के 45 से ज्यादा प्रदर्शकों ने हिस्सा लिया था तथा उन्होंने वहां अपने अभिनव उत्पादों तथा दृष्टिकोण का भी प्रदर्शन किया था ताकि वे उन लोगों के लिए सुरक्षित, सस्ती और टिकाऊ सफाई-व्यवस्था पेश कर सकें, जिनको इसकी सबसे ज्यादा जरूरत है। इस प्रदर्शनी में उन परियोजनाओं पर की गई चर्चाओं को प्रोत्साहित किया गया, जहां वैश्विक स्वच्छता में सुधार के लिए काम किया जा रहा है। उदाहरण के लिए, जिन इलाकों के शौचालय **पानी, सीवर और बिजली से जुड़े हुए नहीं हैं**, वहां किस तरह से मानव अपशिष्ट का निपटान किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त, उन मुद्दों पर भी चर्चा की गई, जहां सफाई व्यवस्था ठीक नहीं है और इसके लिए वहां की सरकारों, सम्बंधित हितधारकों और स्थानीय समुदायों के लोगों का स्वच्छता से सम्बंधित उनके व्यवहार को बदलने और उनमें जागरूकता बढ़ाने की कितनी जरूरत है।

रिइनवेंट द टॉयलेट चैलेंज परियोजना के लिए जिन 6 भारतीय वैज्ञानिकों अथवा संस्थानों को आर्थिक अनुदान दिया गया है, उनका ब्यौरा निम्नलिखित है :-

1. केरल के '**इराम साइंटिफिक सोल्युशन प्राइवेट लिमिटेड**' नामक कंपनी जो अमेरिका के **दक्षिणी फलोरिडा विश्वविद्यालय** के साथ सहयोग कर रही है, को **ऑफ ग्रिड** भारतीय मौसम के अनुरूप सौर ऊर्जा के साथ मिश्रित कचरे के प्रसंस्करण के साथ घरों और सामुदायिक स्तर पर **एकीकृत मॉडुलर इलेक्ट्रॉनिक शौचालय** पर परीक्षण करने के लिए अनुदान दिया गया है। इस परियोजना में एक आधुनिक सार्वजनिक शौचालय को **जैविक उपचार प्रणाली** से जोड़ा जाएगा। एकीकृत मॉडुलर इलेक्ट्रॉनिक शौचालय एक स्वतंत्र रूप से संचालित **स्टैंडअलोन** इकाई में होगा तथा शुरू में इसका परीक्षण किसी उपनगरीय गंदी बस्ती में किया जाएगा।
2. केरल के ही '**अमृता स्कूल ऑफ बॉयोटेक्नोलॉजी**' को ऐसे **वायरल एजेंट** विकसित करने के लिए अनुदान दिया गया है जो मानव मल एवं अपशिष्ट में मौजूद **पैथाजीन्स** अर्थात् रोगजनकों और **दुर्गंध पैदा करने वाले जीवाणुओं** को समाप्त कर सकें तथा कचरा उपचार प्रणालियों में इस प्रौद्योगिकी को एकीकृत तरीके से विकसित करने का मार्ग प्रशस्त हो सके।
3. बेंगलुरू की एक तकनीकी कंपनी '**प्रादीन टेक्नोलॉजीज़ प्राइवेट लिमिटेड**' को एक शौचालय में पानी के उपयोग को '**अल्टा साउंड की अवधारणा**' के परीक्षण की परियोजना दी गई है। इस

परियोजना में अल्ट्रा साउंड के प्रयोग से स्टोरेज टैंक में मलीय कणों के निपटाने की क्षमता बढ़ाने सम्बंधित परीक्षण भी किए जाएंगे।

4. **भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रूड़की** को **फ्रेश रूम्ज लाइफ साइंसिस** के साथ दी गई परियोजना में इन संस्थानों को मानव मल में **ब्लैक सोल्जर** के नाम से **फ्लाई के लार्वा** विकसित करने वाले एक **घरेलु कंटेनर** को विकसित करना है ताकि अपशिष्ट जैव रूपांतरण के द्वारा मूल्यावान उत्पादों में प्रसंस्कृत हो सके। इस परियोजना में यह भी प्रदर्शित किया जाएगा कि ऐसे अपशिष्ट से प्रसंस्कृत हुए उत्पादों की बाजार में कितनी मांग है।
5. **रसायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान, मुबई** को दी गई परियोजना में पानी रहित शौचालय बनाने में **रेत जैसी किसी महीन सामग्री** और **हवा की धौंकनी (ब्लोवर)** के आपसी लिंक की अवधारणा, जिससे मानव मल को गंध और मक्खियों से रहित किया जा सकता है, का मूल्यांकन किया जाएगा।
6. **बिट्स पिलानी** के **के.के. बिरला गोवा कैम्पस** को **गेंट विश्वविद्यालय** और **सस्टेनेबल बॉयो सोल्यूशन एल.एल.पी.** के सहयोग में मिली परियोजना में एक ऐसे **आधुनिक सेफ्टिक टैंक** के डिजाइन को प्रदर्शित किया जाएगा, जो जैविक प्रदूषण को कम करने के लिए **विद्युत-रसायन** को एकीकृत करेगा और निस्त्राव की गुणवत्ता में भी सुधार करेगा। यह प्रणाली एक घर या सामुदायिक अथवा गेट वाली सोसायटी के लिए बनाए जाने वाले सेफ्टिक टैंक का भी प्रदर्शन करेगी।

हमारे देश भारत में खुले में शौच विसर्जन करने वाले लोगों की संख्या वैश्विक संख्या की **55 प्रतिशत** है। हालांकि, केंद्र सरकार **पहली पंचवर्षीय योजना** से लेकर आज तक अपनी प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में बुनियादी स्वच्छता को प्राथमिकता देती आ रही है और भिन्न-भिन्न प्रकार के नामों से देश भर में यह योजना आज तक चालू है। परंतु, अब तक इसका नतीजा कमोबेश शुन्य ही रहा है। सन् 1986 ई. में **सेंट्रल रूरल सेनिटेशन प्रोग्राम,** सन् 1999 में **टोटल सेनिटेशन कैंपेन,** सन् 2003 में **निर्मल ग्राम पुरस्कार,** जैसी परियोजनाएं चलाई गई जो कागजों में तो बेहद सफल बताई गई, परंतु वास्तविक परिदृश्य सरकारी आंकड़ों के उलट हैं। गांवों में बनाए जा रहे पिट वाले सस्ते शौचालय स्वच्छता बढ़ाने की अपेक्षा रोगों को आमंत्रित कर रहे हैं। बहुत से गांवों में ऐसे शौचालयों की वजह से भूमिगत जल मानव अपशिष्ट के पैथाजीन्स की वजह से प्रदूषित हो चुका है और वहां लोगों में **हैपेटाइटिस-बी** जैसे रोग प्रदर्शित हो रहे हैं। कुछ राज्यों के चुनींदा गांवों में इन योजनाओं को संजीदगी से लागू भी किया गया है। परिणामस्वरूप, ऐसे गांव अपवाद स्वरूप बेहतर स्वच्छता प्राप्त करने में भी अग्रणी रहे हैं।

सरकारी प्रयासों के अलावा कुछ स्वयंसेवी संस्थाएं, शैक्षणिक संस्थान और भारत के रक्षा अनुसंधान संस्थान आदि ने मानव अपशिष्ट के निपटान की दिशा में बहुत महती काम किया है। उदाहरण के लिए, **पदम् भूषण डॉ. बिंदेश्वर पाठक** द्वारा गठित **सुलभ इंटरनेशनल** नामक भारतीय सामाजिक सेवा संगठन ने देश भर में हजारों सार्वजनिक सुलभ शौचालय बनाकर पर्यावरण संरक्षण की दिशा में बेहतर काम किया है। अब तक **सुलभ** ने देश भर में 8,000 सार्वजनिक सुलभ शौचालय तथा 200 बॉयो गैस संयंत्र स्थापित किए हैं, जिनसे लगभग 1.5 करोड़ लोग रोजाना लाभान्वित हो रहे हैं। **सुलभ शौचालय** एक पर्यावरणपरक **दो गड्ढे वाला पोर-फ्लश शौचालय** की तकनीक पर आधारित शौचालय है जो तकनीकी रूप से उपयुक्त, सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से स्वीकार्य तथा आर्थिक रूप से सस्ता है। यह एक स्वदेशी प्रौद्योगिकी है तथा ऐसे शौचालय का निर्माण स्थानीय श्रमिकों और स्थानीय सामग्री से किया जा सकता है। सुलभ का दावा है कि ऐसे शौचालयों में मानव मल का सुरक्षित निपटान साइट पर ही हो जाता है। शौचालय की सीट को 20 डिग्री से 28 डिग्री

की ढलान के साथ डिजाइन किया गया है। इसमें 20 एमएम वाटर सील के साथ डिजाइन किए गए **ट्रैप-फ्लश** को विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है, जिसमें फ्लश करने के लिए मात्र 1.5 लीटर पानी की जरूरत पड़ती है। सुलभ शौचालय के दो गड्ढे होते हैं, जिन्हें आमतौर पर तीन वर्ष के उपयोग के लिए बनाया जाता है और उनका बारी-बारी से उपयोग किया जाता है।

डॉ. बिंदेश्वर पाठक सुलभ शौचालय को सामाजिक बदलाव का एक बेहतर उपकरण मानते हैं। जहां तक ऐसे शौचालयों के रख-रखाव और निर्माण का प्रश्न है, **सुलभ** इन शौचालयों का प्रयोग करने वालों से थोड़ी सी फीस भी वसूलता है। डॉ. बिंदेश्वर पाठक का कहना है कि सुलभ इंटरनेशनल ने देश में 35,000 लोगों को रोजगार मुहैया कराया है, जबकि दूसरे अनेक लोग उनकी इस मुहिम से अपरोक्ष रूप से भी जुड़े हुए हैं। डॉ. बिंदेश्वर पाठक को अपने काम के लिए राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बहुत बड़ी पहचान और सम्मान प्राप्त हुए हैं।

भारत के रक्षा मंत्रालय के अंतर्गत **रक्षा अनुसंधान एवं विकास संस्थान-डीआरडीओ** द्वारा पर्यावरण के अनुकूल एक ऐसा **बॉयो शौचालय** विकसित किया है जो मानव मल के निपटान के लिए एक नई एवं विकसित प्रौद्योगिकी प्रदान करता है। बॉयो अर्थात् जैव शौचालय किसी भी प्रकार के तापमान और मौसम (-55 डिग्री सेल्सियस से लेकर 60 डिग्री सेल्सियस) के बीच में एकदम से कारगर है। नई प्रौद्योगिकी से विकसित किए गए इन शौचालयों के बैक्टिरिया समूह मानव अपशिष्ट को अपघटित करके उसे गंदहीन व रंगरहित ज्वलनशील मीथेन गैस में परिवर्तित कर देते हैं।

बॉयो शौचालय के मुख्य घटक जमीनी ढांचे एवं **बॉयो-डायजैस्टर** टैंक के ऊपर फैब्रीकेट किए जाते हैं। बॉयो-डायजैस्टर एक बेलनाकार स्ट्रक्चर होता है जिसमें मानव मल जाने का तथा बॉयो-गैस निकलने के द्वार बने होते हैं। इस डायजैस्टर में 5 डिग्री से 30 डिग्री सेल्सियस तक का तापमान रखा जाता है। जब ऐसा शौचालय बॉयो-डायजैस्टर से जुड़ा हो तब ही कोई व्यक्ति उसका उपयोग कर सकता है। बॉयो-डायजैस्टर में मल की **'रात्रि मृदा क्षरण'** की **माइक्रोबियल प्रक्रिया** चलती रहती है जिससे मल गंद-हीन और रंग रहित होकर बॉयो गैस में परिवर्तित हो जाता है। **विष्ठा की गंद, विष्ठा** तथा **ठोस पदार्थ,** जिनसे प्राणियों में रोग फैलते हैं, पूरी तरह से समाप्त हो जाते हैं। यदि वजन के हिसाब से भी देखें तो ठोस अपशिष्ट का वजन 90 प्रतिशत कम हो जाता है जबकि बॉयो गैस का वातावरण में लगातार प्रवाह होता रहता है। इस बॉयो गैस का उपयोग खाना पकाने, पानी गर्म करने के लिए, कमरे को गर्म रखने इत्यादि में भी किया जा सकता है। शेष बचे अपशिष्ट को किसी जमीन या सोखने वाले गड्ढों में बेहिचक डाला जा सकता है क्योंकि उससे पर्यावरण पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है। **डीआरडीओ** ने **'ट्रांसफर ऑफ टेक्नोलॉजी'** के तहत देश की 50 कंपनियों को सन् 2012 में **बॉयो-टॉयलेट** का निर्माण करने का लाइसेंस जारी किया था। भारतीय रेलवे ने भी अब अपनी कुछ चुनिंदा रेलों में बॉयो-टॉयलेट का प्रयोग आरंभ कर दिया है।

हमारे देश में पर्वतीय, कम तापमान वाले दुर्गम इलाकों, चलती हुई रेलगाड़ियों, बसों, रेलवे लाईनों, बड़े शहरों, खान (माईन्ज) वाले इलाकों, समुद्री तटों, ग्रामीण क्षेत्रों, लम्बी दूरी की बसों इत्यादि में शौच-विसर्जन एवं उसका निपटान एक बहुत बड़ी एवं एक ज्वलंत समस्या है। ग्लेशियरों के क्षेत्र में तो यह समस्या और भी ज्यादा गंभीर एवं विकट हो जाती है, क्योंकि वहां तापमान -40 डिग्री से भी ज्यादा गिर जाता है। कम तापमान होने से प्राकृतिक रूप से होने वाले विघटन की प्रक्रिया एकदम से रूक जाती है जिससे मानव मल ज्यादा समय तक संचय होता रहता है जिससे पर्यावरण पर जोखिम बढ़ता रहता है। बर्फ पर सीधे धूप पड़ने से जब बर्फ पिघल जाती है तो वहां दबा हुआ मल उजागर हो जाता है जिससे वहां बदबू फैल जाती है। इससे **जलीय पारिस्थितिकी तंत्र** तो नष्ट होता ही है, प्रभावित इलाके में मानव मल के कारण **हैजा, दस्त, टायफाईड** और **अन्य संक्रामक रोग** भी फैल जाते हैं। इसीलिए बॉयो-टॉयलेट की **डीआरडीओ** द्वारा अविष्कृत यह जैव प्रौद्योगिकी भारत के तमाम इलाकों में बहुत कारगर एवं उपयुक्त है। इस तकनीक में जो प्रक्रिया अपनाई जाती है उससे मानव मल एवं अपशिष्ट पूर्णतः संशोधित हो जाते हैं और उसमें किसी तरह के रोगाणु और कीटाणु (पैथोजीन) नहीं रह सकते हैं जिस से यह पर्यावरणपरक हो जाता है। इस प्रौद्योगिकी में मुख्यतः दो घटक होते हैं-

1. **बैक्टिरिया :** निम्न एवं निरंतर कम तापमान में सक्रिय रहने वाले बैक्टिरिया जिन से **एनोरोबिक बैक्टिरियों** का एक ऐसा समूह तैयार किया जाता है जो 5 डिग्री तापमान में भी सक्रिय रह सकते हैं। यही घटक **जैव पाचक यानि बॉयोडायजैस्टर** में एक बीज सामग्री के रूप में कार्य करता है तथा मानव मल को **मीथेन गैस व कार्बन डाइ ऑक्साइड** गैस में परिवर्तित कर देता है।
2. नियंत्रित तापमान वाला **बॉयोडायजैस्टर** - स्टेनलैस स्टील से बना हुआ एक बेलनाकार यंत्र होता है जिसमें मुख्यतः दो चैम्बर होते हैं जिनमें से एक में बॉयोलॉजिकल और दूसरे में मानव मल का कैमिकल ट्रीटमेंट किया जाता है। इन दोनों प्रक्रियाओं से मल गंदहीन और रंगहीन गैस में परिवर्तित हो जाता है।

डीआरडीओ द्वारा विकसित एवं पेटैन्ट कराई गई इस पर्यावरणपरक तकनीक से देश भर में **जैव शौचालयों** अर्थात् **बॉयो-टॉयलेट** का निर्माण करने के लिए रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन ने देश की 50 कंपनियों को लाइसेंस दिया है, जो प्रति शौचालय का **15 हजार** रुपये की लागत से निर्माण कर रहे हैं

Courtesy:

M. K. PROTEINS LTD.

Naraingarh Road, Village Garnala, Ambala City (Haryana), India - 134003

T.: 0171-2679358 | www.mkproteins.in | mkproteins1@gmail.com | info@mkproteins,in

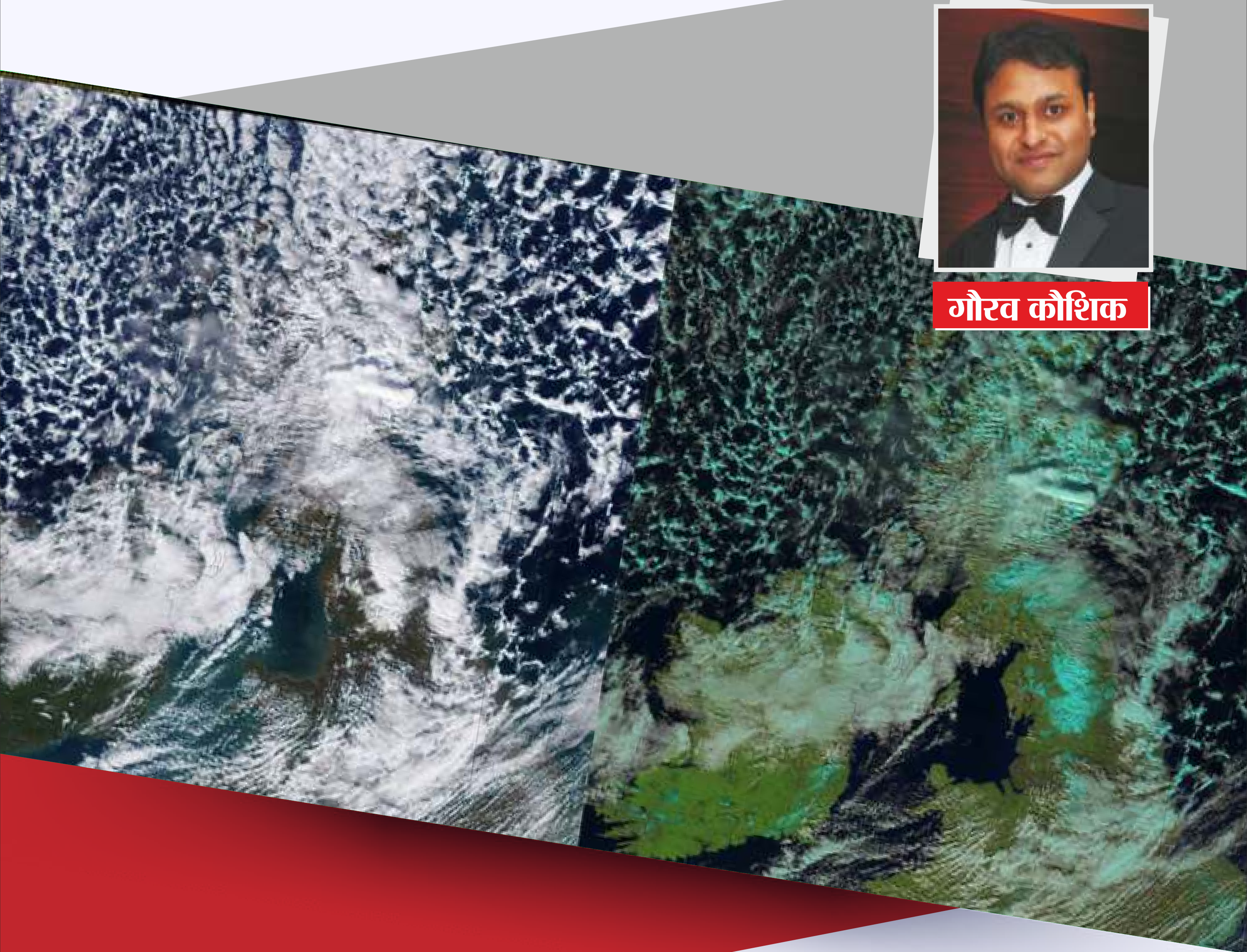

गौरव कौशिक

हमारे आकाश एवं वायुमंडल में छुपे हैं अनेक रहस्य !

हमारी पृथ्वी के चारों ओर सैंकड़ों किलोमीटर की मोटाई में लिपटा हुआ गैसीय आवरण वायुमण्डल है। वायुमण्डल विभिन्न गैसों का मिश्रण है जो पृथ्वी को चारो ओर से घेरे हुए है। दुनिया के अन्य सभी उत्कृष्ट तत्वों की तुलना में हम वायु के अधिक प्राणी हैं। वायु पंच महाभूतों में भी प्रमुख तत्व है। वायु का एक रूप 'प्राण' है। जब हवा आकाश में चलती है तो उसे वायु कहते है और जब यही वायु हमारे शरीर में 10 भागों में काम करती है तो इसे 'प्राण' कहते हैं। अत: 'प्राण' वायु का अर्थ उस वायु से है जो हमारे शरीर को जीवित रखती है। शरीर से वायु के निकल जाने को ही प्राण निकलना कहते हैं। हमारी धरती के 75 प्रतिशत भाग में जल है और शत प्रतिशत हिस्से में वायु है। जाहिर है, वायु हर जगह मौजूद है। समुद्र के भीतर भी और धरती से सैकड़ों किलोमीटर ऊपर भी। स्पष्ट है, धरती पर वायु की सत्ता सबसे बड़ी है। वायु के बगैर व्यक्ति एक क्षण भी जिंदा नहीं रह सकता है। वायु में ही अग्नि और जल तत्व छुपे रहते हैं। वायु ठंडी होकर जल बन जाती है और गर्म होकर अग्नि का रूप धारण कर लेती है।

यद्यपि हम ठोस जमीन पर चलते हैं और समुद्र में कभी-कभार डुबकी भी लगाते हैं परन्तु, हम वायुमंडल के साथ हमेशा अंतरंग संपर्क में रहते हैं - इसमें डूबे रहते हैं, जीवित रहने के लिए वायु को फेफड़ों में भर कर सांस लेते हैं और सदैव वायुमंडल के मौसम की मार के अधीन रहते है। इस अंतरंगता के बावजूद, वायुमंडल ने हम से कई रहस्य छुपा कर रखे हुए हैं। वायुमंडल में भयानक हवाएं चलती हैं, अद्भुत रोशनी और शानदार चमक के साथ-साथ अंतरिक्ष के किनारे पर बर्फ के कण एवं अदृश्य ज्वार झिलमिलाते हैं।

एक बादल की बर्फ और पानी की बूंदों को बढ़ने के लिए बीज की आवश्यकता होती है। हालांकि, ये खनिज कण या बैक्टीरिया भी हो सकते हैं, जबकि कुछ शोधकर्ताओं का सुझाव है कि ये कॉस्मिक किरणें भी शामिल हो सकती हैं। वे दावा करते हैं कि जब अंतरिक्ष से ये उच्च-ऊर्जा वाले कण वातावरण से टकराते हैं तो, हमारी जलवायु के नतीजों सहित अधिक बादल बनते हैं। पिछले साल स्विट्जरलैंड के जिनेवा के पास सर्न शहर में हुए एक प्रयोग से पता चला कि ब्रह्मांडीय किरणें वायुमंडलीय रसायनों को अल्ट्रा-फाइन डस्ट में बदलने में मदद कर सकती हैं। उक्त परिणाम ने उक्त सिद्धांत के समर्थकों को प्रोत्साहित तो किया, परन्तु बर्फ के क्रिस्टल को बीजने के लिए धूल के कण बहुत ही छोटे हैं। बादल के कुछ रहस्यों को हाल ही में सुलझाया गया है, जिन में यह भी शामिल है कि विमान किस तरह से ५० किलोमीटर चौड़े बादल के छिद्रों को ढकेलते हैं। एक विमान का मार्ग बर्फ के क्रिस्टल के गठन को ट्रिगर कर सकता है, वह अंतर्निहित गर्मी और गर्म हवा का प्रक्षेपण करके बादल

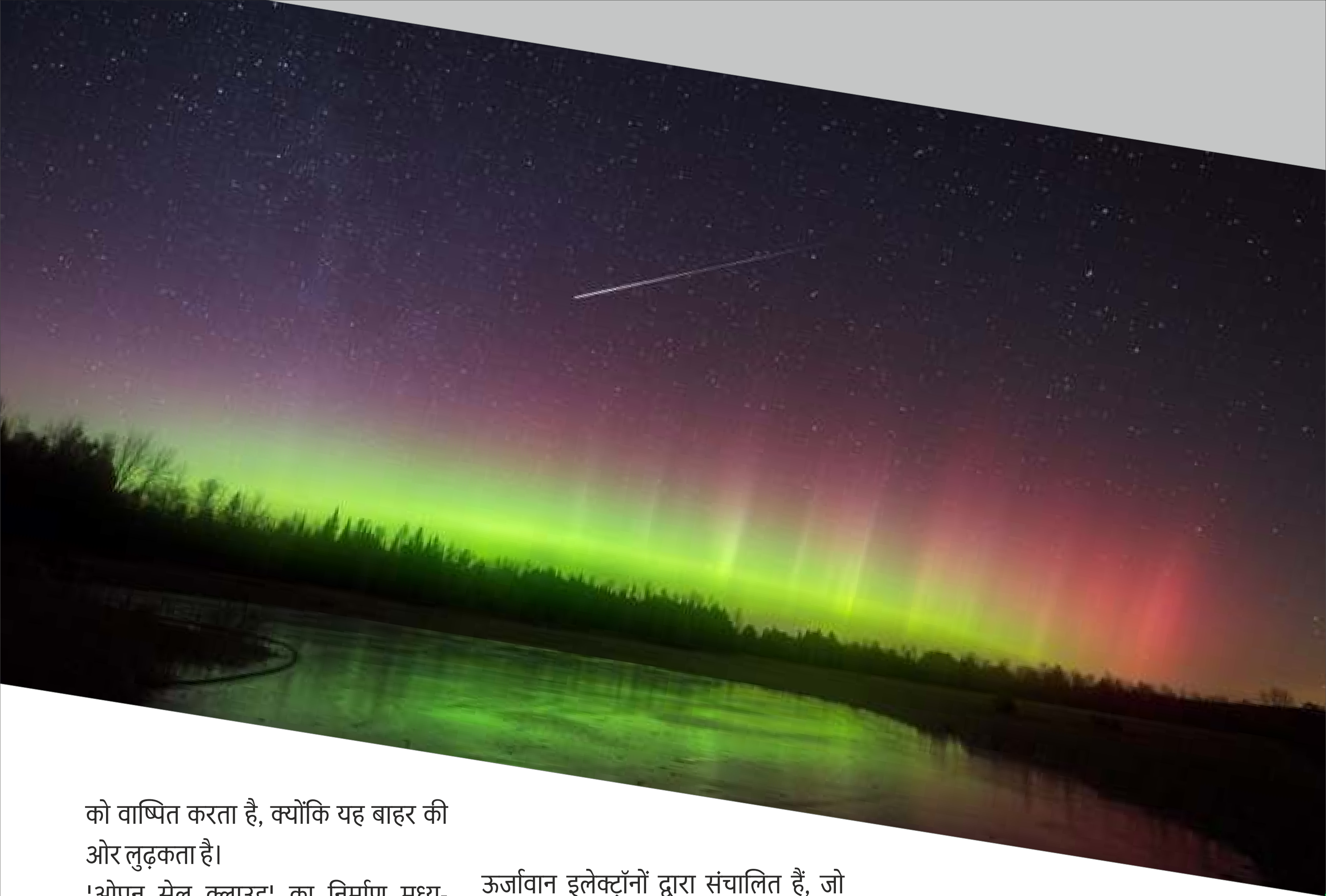

को वाष्पित करता है, क्योंकि यह बाहर की ओर लुढ़कता है।

'ओपन सेल क्लाउड' का निर्माण मध्य-अक्षांश में कम दबाव प्रणाली या चक्रवात के पीछे की ओर एक नियमित घटना है। उत्तरी गोलार्ध में में बनी एक निम्न-दबाव प्रणाली को आसपास की हवा में खींचा जाता है जो उसको उल्टी दिशा में घुमाती है। इस का अर्थ यह हुआ कि कम दबाव वाले केंद्र के पीछे की तरफ उत्तर से ठंडी हवा चलती है और सामने की तरफ भूमध्य रेखा के नजदीकी अक्षांशों से गर्म हवा खींची जाती है। वायु द्रव्यमान के इस संचलन को ऊष्मा का क्षैतिज स्थानांतरण कहा जाता है और जब गर्म हवा का अभिवहन गर्म समुद्र के ऊपर होता है, तो अक्सर ओपन सेल क्लाउड का निर्माण होता है जो केवल ट्रोपोस्फीयर की निचली परतों तक ही पहुँचता है।

पृथ्वी के ध्रुवीय क्षेत्र में प्रकाश वृत्त के दो महान छल्ले हैं। रहस्मयी रोशनियां अॅरोरा बोरेलिस और अॅरोरा अॅस्ट्रालिस अंतरिक्ष से ऊर्जावान इलेक्ट्रॉनों द्वारा संचालित हैं, जो हमारे चुंबकीय क्षेत्र द्वारा ध्रुवों की ओर नीचे की ओर घूमती हैं। अधिकांश समय ये रहस्मयी रोशनियां नंगी आंखों से मुश्किल से ही दिखाई देती हैं। फिर भी, कभी-कभी वे चमक में इतनी भड़क जाती हैं कि सौ या हजार गुना तेज हो जाती हैं। या मेरुज्योति, वह रमणीय दीप्तिमय छटा है जो ध्रुवक्षेत्रों के वायुमंडल के ऊपरी भाग में दिखाई पड़ती है। उत्तरी अक्षांशों की ध्रुवीय ज्योति को सुमेरु ज्योति या उत्तर ध्रुवीय ज्योति, तथा दक्षिणी अक्षांशों की ध्रुवीय ज्योति को कुमेरु ज्योति या दक्षिण ध्रुवीय ज्योति, कहते हैं।

ध्रुवीय ज्योति का निर्माण तब होता है जब पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र सौर पवनों द्वारा पर्याप्त रूप से प्रभावित होता है तथा इलेक्ट्रोन व प्रोटोन के आवेशित कणों के प्रक्षेप पथ को सौर पवनों तथा चुम्बकगोलीय प्लाज्मा उन्हें अप्रत्याशित वेग से वायुमंडल के ऊपरी सतह बह्यामंडल में भेज देते हैं। पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र में प्रवेश के कारण इनकी ऊर्जा क्षय हो जाती है। परिणामस्वरुप, वायुमंडलीय कणों के हुए आयनीकरण तथा संदीपन के कारण अलग-अलग रंगों के प्रकाश का उत्सर्जन होता है। दोनों ही ध्रुवीय क्षेत्र के आसपास की पट्टियों के निकट अॅरोरा का निर्माण कणों के अप्रत्याशित वेग के त्वरण पर भी निर्भर करता है। टकराने वाले हाइड्रोजन के परमाणु वायुमंडल से इलेक्ट्रॉन पुनः प्राप्त करने के पश्चात् आवेशित प्रोटॉन सामान्यतः प्रकाशीय उत्सर्जन करते हैं। प्रोटॉन ध्रुवीय ज्योति प्रायः निम्न अक्षांशों से देखे जा सकती हैं।

जब चाँद के ज्वार-भाटा के कारण समुद्र की लहरें उठती और गिरती हैं, हमारा हवा का महासागर भी एक अधिक जटिल धड़कन की

ओर बढ़ता है। सूर्य की गर्मी और चंद्रमा का गुरुत्वाकर्षण मिलकर वातावरण में दबाव और गति को प्रभावित करने वाले दैनिक चक्र को चलाती हैं। इन वायु ज्वार में आश्चर्यजनक शक्ति होती है, जो नीचे भूस्खलन को गति देने और ऊपर अंतरिक्ष में रेडियो लिंक को जाम करने और उपग्रहों को पकड़ने के लिए पहुंचती है। कम ऊंचाई पर, वायु का ज्वार साधारण मौसम की पृष्ठभूमि के मुकाबले मुश्किल से ध्यान देने योग्य होता है। फिर भी जैसे-जैसे दबाव की ज्वार की लहरें ऊपर की ओर बढ़ती हैं, उनकी ऊर्जा बहुत पतली हवा में संचारित होती है, जो तूफान की गति तक पहुंचते हुए अधिक हिंसक रूप से आगे बढ़ती है। कुछ सौ किलोमीटर ऊपर, एक उच्च ज्वार वातावरण को काफी सघन बना सकता है, जिससे उपग्रहों की परिक्रमा पर खिंचाव बढ़ जाता है। इंजीनियरों को इसका ट्रैक रखने की अनुमति देनी चाहिए।

बोल्डर, कोलोराडो विश्वविद्यालय निगम में वायुमंडलीय अनुसंधान की मौर्या हेगन के अनुसार वायु के ज्वार रेडियो संचार में हस्तक्षेप कर सकता है। उन्हें संदेह है कि हवा के ज्वार ऊपरी वायुमंडल में प्लाज्मा के बुलबुले बनाने में मदद कर सकते हैं जो कि जीपीएस डेटा सहित, रेडियो सिग्नल को गड़बड़ा देते हैं। ज्वार का एक नया स्रोत पिछले कुछ वर्षों में सौर गतिविधि में एक शांति काल के दौरान में खोजा गया है। ज्यादातर समय, सौर तूफान और चौंध एवं दमक के बुफ़े हमारे वायुमंडल की बाहरी परतों को भड़काते हैं, जो विद्युत रूप से चार्ज आयनमंडल में गड़बड़ी पैदा करते हैं, लेकिन 2006 के आसपास से सूरज बहुत शांत रहा है। इन शांत स्थितियों ने आयनमंडल में आवेश के घनत्व में सूक्ष्म तीव्र प्रतिमानों को प्रकट किया।

आकाशीय बिजली ज्यादातर बरसात के दिनों में गिरती है। इसकी चपेट में वो लोग आते हैं जो खुले आसमान के नीचे, हरे पेड़ के नीचे होते हैं, पानी के करीब होते हैं या फिर बिजली और मोबाइल के टॉवर के नजदीक होते हैं। आकाशीय बिजली आधुनिक विज्ञान के लिए भी लगभग उतनी ही हैरान करने वाली है, जितनी यह हमारे विस्मयाभिभूत पूर्वजों के लिए थी। यद्यपि, अब हम आश्वस्त हो सकते हैं कि आकाशीय बिजली देवताओं द्वारा चलाया गया कोई हथियार नहीं है, परन्तु आज भी इसके पीछे के सही तंत्र को अच्छी तरह से नहीं समझा जा सका है। यह एक रहस्य ही है कि गरजने वाले बादल इतने अधिक आवेशित कैसे हो जाते हैं। उससे भी बड़ी पहेली यह है कि कैसे तड़ित के वज्रपात का एक विशाल करंट हवा में से कभी भी प्रवाहित होना शुरू हो जाता है जबकि हवा एक विद्युत इन्सुलेटर है। एक संवाहक प्लाज्मा बनाने के लिए हवा का टूटना संभव है, लेकिन इसके लिए एक मिलियन वोल्ट

प्रति मीटर से अधिक के एक भयंकर तीव्र विद्युत क्षेत्र की जरुरत होती है। हालांकि, मौसम वैज्ञानिकों ने स्थानीय परिस्थितियों का परीक्षण करने के लिए आकाशीय विद्युत वज्रपात के क्षेत्र में सैकड़ों उपकरण-युक्त गुब्बारे और रॉकेट आदि भेजे हैं, परन्तु सबसे मजबूत क्षेत्र जो उन्होंने देखे हैं, वे उसके मूल्य के दसवें हिस्से के बराबर भी नहीं थे। आकाशीय विद्युत एक स्वाभाविक रूप से होने वाला इलेक्ट्रोस्टैटिक डिस्चार्ज है, जिसके दौरान वायुमंडल या जमीन में दो विद्युत आवेशित क्षेत्र अपने आप को अस्थायी रूप से समान कर लेते हैं, जिससे तात्कालिक रूप से एक अरब जूल ऊर्जा निकलती है। यह निर्वहन विद्युत चुम्बकीय विकिरण की एक विस्तृत श्रृंखला का उत्पादन कर सकता है जो इलेक्ट्रॉनों के तीव्र संचार द्वारा ब्लैक-बॉडी रेडिएशन के रूप में दृश्यमान प्रकाश की शानदार चमक द्वारा निर्मित बहुत गर्म प्लाज्मा से होता है। तड़ित की वजह से निर्वहन के आसपास के क्षेत्र में गड़गड़ाहट का भारी शोर होता है, जो गैसों के रूप में शॉक वेव से दबाव में अचानक वृद्धि के कारण विकसित होता है।

वातावरण में तेजी से घूमने वाली हवा की ऊर्ध्वाधर कीप की तरह के भयानक तूफ़ान 'टॉर्नेडो' अर्थात बवंडर भी आते हैं। बवंडरों में हवाओं की रफ़्तार 250 मील प्रति घंटे तक की हो सकती है और ये एक मील चौड़ाई तक फैले हुए होते हैं। एक बवंडर एक बार में लगभग 50 मील लंबे मार्ग को तय करके इसके रास्ते आए पेड़-पौधों, बिल्डिंगों तक को तहस-नहस कर सकता है। बवंडरों को ट्विस्टर्स के रूप में भी जाना जाता है। बवंडर कड़कती हुई बिजली, गरजते हुए बादलों एवं वर्षा के साथ आए तूफ़ान में ही पैदा होते हैं और अक्सर अपने साथ ओले भी लाते हैं। विशालकाय बवंडरों में लगातार चलने वाली आंधी जिसे सुपरकेल्स कहा जाता है और सुपरकेल्स के साथ आने वाले टॉर्नेडो सबसे विनाशकारी बवंडर होते हैं। यद्यपि, ये हिंसक तूफान दुनिया भर में बनते हैं, लेकिन संयुक्त राज्य अमेरिका में हर साल लगभग एक हजार बवंडरों का आना आकर्षण का एक प्रमुख कारण है। 'टॉर्नेडो एले', अमेरिका का एक ऐसा क्षेत्र जिसमें दक्षिण डकोटा, नेब्रास्का, कंसास, ओक्लाहोमा, उत्तरी टेक्सास और पूर्वी कोलोराडो के पूर्वी राज्य के क्षेत्र शामिल है, को प्राय: इन तूफानों का सबसे शक्तिशाली और विनाशकारी क्षेत्र कहते हैं। अमेरिका के बवंडरों में प्रति वर्ष लगभग 100 मौतें हो जाती हैं, जबकि 1500 से अधिक लोग घायल होते हैं। बवंडर अपने रास्ते में सब कुछ फाड़ देता है। यह प्रकृति की कुछ सबसे विनाशकारी शक्तियों में से है।

Save Environment

HARI INTERNATIONAL

Mfg & Exporter - Floor Covering & Home Furnishings

SEDEX Approved Unit & An ISO 9001-2000 Certified Unit

Krishna Lawn Street, Sector 29, HUDA, Part - II, Panipat - 132103 (Haryana) India

Email: Sales@hariinternational.com | Web: www.hariinternational.com

शैलेन्द्र अरोड़ा

सांसों में घुलती जहरीली हवा से जीवन-अवधि हुई कई साल कम

वायु प्रदूषण दुनिया भर में मृत्यु दर की वृद्धि में जोखिम वाला पांचवां प्रमुख कारण है। यह कई बेहतर-ज्ञात जोखिमों, जैसे कि कुपोषण, शराब पीने की लत, और शारीरिक निष्क्रियता से भी ज्यादा मौतों के लिए जिम्मेदार है। हर साल, सड़क दुर्घटनाओं या मलेरिया से संबंधित बीमारियों से भी ज्यादा लोग वायु प्रदूषण से मरते हैं। वायु प्रदूषण भौगोलिक सीमाओं को नहीं पहचानता है। जिस तरह ग्रामीण इलाकों से प्रदूषित हवा शहरों में जाती है, उसी तरह शहर के प्रदूषण भी अब ग्रामीण प्रदूषण की ओर बढ़ रहे हैं। देश के कई शहरों में वायु प्रदूषण इतना बढ़ चुका है कि वहां आकाश भी साफ़ दिखाई नहीं देता है। परन्तु, देश के नागरिक इस प्रदूषण के इतने आदी हो चुके हैं कि मानों, उन्होंने इस घातक वायु प्रदूषण के साथ समझौता कर लिया है। हालांकि, यह समय सब के जागृत होने का है। पिछले एक दशक में तो भारत में वायु प्रदूषण बहुत बढ़ा है, जिससे यहां के लोगों में स्वास्थ्य की सबसे आम समस्या 'अस्थमा' तेजी से बढ़ी है जोकि बीमारियों के आधे से अधिक मुद्दों के लिए जिम्मेदार है।

भारत में सभी स्वास्थ्य जोखिमों की रैंकिंग में वायु प्रदूषण अब मृत्यु का तीसरा सबसे बड़ा कारण बन चुका है। वायु प्रदूषण से होने वाली घातक बीमारियों के कारण भारत में जीवन की अवधि 2.6 साल कम हो गई है। हमारे छोटे कस्बों से लेकर सभी बड़े-बड़े शहरों में प्रदूषण इतना है कि अब यहां सांस लेना भी मुश्किल है। इस वायु प्रदूषण के कारण भारत में प्रत्येक 10,000 बच्चों में से औसतन 9 बच्चे पांच साल के होने से पहले ही मर जाते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भारत के मौजूदा पर्यावरण की स्थिति के विषय पर उक्त रिपोर्ट देते हुए कहा है कि इस देश में शिशु लड़कियों के लिए अधिक जोखिम है, क्योंकि यहां 10,000 लड़कियों में से 10 लड़कियां पांच वर्ष से पहले ही मर जाती हैं। भारत में होने वाली सभी मौतों में से 12.5 प्रतिशत मौतों के लिए वायु प्रदूषण पूरी तरह से जिम्मेदार है। बच्चों पर इसका असर उतना ही चिंताजनक है। देश में खराब हवा के कारण पांच वर्ष से कम आयु के 1,00,000 से अधिक बच्चों की असमय मृत्यु हो जाती है। ये आंकड़े सरकारी और अंतरराष्ट्रीय संगठनों के सार्वजनिक प्लेटफार्म पर उपलब्ध आंकड़ों पर आधारित हैं।

हालांकि, भारत ऐसे देशों में से पहला एक ऐसा देश है, जिसने चरणबद्ध तरीके से गैर-इलेक्ट्रिक वाहनों को हटाने का संकल्प लिया था परन्तु, ई-वाहनों की बिक्री को बढ़ावा देने के लिए इसकी राष्ट्रीय योजना अभी तक सही तरीके से क्रियान्वित नहीं हुई है। देश में सन

2020 ई० तक 1 करोड़ 60 लाख ई-वाहनों को उतारने के लक्ष्य की तुलना में, मई 2019 तक देश में 2 लाख 80 हज़ार ई-वाहन ही हैं। दूसरी ओर, देश में ठोस कचरे का बोझ असहनीय होता जा रहा है। वास्तव में, पिछले तीन वर्षों में देश के 22 राज्यों में अस्वाभाविक लैंडफिल और डंप यार्ड के खिलाफ 79 प्रमुख विरोध, प्रदर्शन एवं धरने दर्ज किए गए हैं। महाराष्ट्र में 16 प्रमुख विरोध, प्रदर्शन एवं धरने दर्ज हुए, यह राज्य अपने कुल कचरे के 43 प्रतिशत हिस्से को असंसाधित छोड़ देता है। जबकि, भारत अपने बायोमेडिकल कचरे के 96 प्रतिशत को संसाधित करने का दावा करता है, लेकिन आठ राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में डिफ़ॉल्ट रूप से अस्पताल मौजूद हैं, जहां अस्पतालीय एवं बायोमेडिकल कचरे को संसाधित नहीं किया जा रहा है। देश में सन 2009 ई० और सन 2016-17 ई० के बीच खतरनाक-अपशिष्ट पैदा करने वाले उद्योगों की संख्या में 56 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है। इनमें से अधिकांश उद्योग कानून द्वारा अनिवार्य रूप से तय अपनी अपशिष्ट सूची को ठीक नहीं रख रहे हैं। ज्ञात हो, ठोस कचरे का सही निपटान न हो तो वहां से भी घातक वायु-प्रदूषण होता है।

पृथ्वी के साफ़-सुथरे वायुमंडल में जब जहरीली गैसों, महीन कणों और जैविक अणुओं सहित हानिकारक या अत्यधिक मात्रा में महीन पार्टीकल्ज़ का प्रवेश होता है तो उस स्थिति को वायु प्रदूषण कहते हैं। भारत में वायु प्रदूषण एक गंभीर मुद्दा है, यह धूम्रपान, उच्च रक्तचाप, बच्चों और माताओं के कुपोषण, और मधुमेह से भी अधिक जोखिम कारक है। भारत के कम से कम 14 करोड़ लोग विश्व स्वास्थ्य संगठन की सुरक्षित सीमा से 10 गुणा या उससे भी अधिक बार इस प्रदूषित हवा में सांस लेते हैं। दुनिया के 20 सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में से 13 शहर भारत में हैं, जहां वायु प्रदूषण का स्तर बहुत ज्यादा है। वायु प्रदूषण के चलते हर साल 20 लाख भारतीयों की अकाल मृत्यु होती है। शहरी क्षेत्रों में, अधिकांश उत्सर्जन वाहनों और उद्योग से आते हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में, खाना पकाने और घरों को गर्म रखने के लिए बायोमास जलाने से बहुत अधिक प्रदूषण उत्पन्न होता है। शरद ऋतु और सर्दियों के महीनों में, मैकेनिकल टिलरिंग और अगली फ़सल की बुआई के लिए कृषि क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर फसल अवशेष जलाना बहुत बड़ी मात्रा में धुएं, स्मोग और महीन कणों के प्रदूषण का एक प्रमुख स्रोत है।

यद्यपि, भारत में प्रति व्यक्ति ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम है लेकिन, कुल मिलाकर यह देश, चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद ग्रीनहाउस गैसों का तीसरा सबसे बड़ा उत्सर्जक है। धूम्रपान न करने वालों पर हुए एक अध्ययन से पता चला है कि यूरोपीय

लोगों की तुलना में भारतीयों के फेफड़े 30 प्रतिशत कम काम करते हैं। वायु प्रदूषण को विनियमित करने के लिए 1981 में वायु (रोकथाम और प्रदूषण नियंत्रण) अधिनियम पारित किया गया था और इसके कारण कुछ औसत दर्जे का सुधार भी हुआ। हालांकि, सन 2016 ई० के पर्यावरण प्रदर्शन सूचकांक में 180 देशों में से भारत का 141 वां स्थान था। सन 2015 ई० में, भारत सरकार ने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर के साथ मिलकर राष्ट्रीय वायु गुणवत्ता सूचकांक का शुभारंभ किया। सन 2019 ई० में, भारत ने 'द नेशनल क्लीन एयर प्रोग्राम' अर्थात 'राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम' का शुभारंभ किया ताकि, सन 2017 ई० को आधार वर्ष मानते हुए सन 2024 ई० तक वायुमंडल में पार्टिकुलेट मैटर 2.5 और पार्टिकुलेट मैटर10 की सांद्रता एवं संकेंद्रन में अंतिम राष्ट्रीय लक्ष्य की तुलना में 20 प्रतिशत से 30 प्रतिशत की कमी आ सके। इसे उन 102 शहरों में शुरू किया जाएगा जिन के लिए यह माना जाता है कि वहां वायु की गुणवत्ता राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानकों की तुलना में बहुत खराब है।

देश में बढ़ते वायु प्रदूषण का व्यक्तियों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाला दुष्प्रभाव चिंता का सबसे महत्वपूर्ण कारण है। लंबे समय तक महीन कणों के एक्सपोजर से अस्थमा, ब्रोंकाइटिस, फेफड़ों के कैंसर और दिल के दौरे जैसे श्वसन और हृदय रोग हो सकता है। संयुक्त राष्ट्र की 'ग्लोबल बर्डन ऑफ डिजीज स्टडी' ने पाया है कि भारत में बाहरी वायु प्रदूषण लोगों का पांचवां सबसे बड़ा हत्यारा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक अध्ययन के अनुसार, वायु प्रदूषण से होने वाली बीमारियों से यहां लगभग 6,20,000 मौतें हो जाती हैं। एक गैर-लाभकारी संस्था 'हेल्थ इफेक्ट्स इंस्टिट्यूट' के अनुसार एक लाख से अधिक भारतीय वायु प्रदूषण के कारण हर साल समय से पहले मर जाते हैं। दिल्ली हार्ट एंड लंग इंस्टीट्यूट के अनुसार दिल्ली के लगभग आधे बच्चों की संख्या जितने देश के लाखों बच्चों के फेफड़े ठीक से कार्य नहीं करते हैं और उनमें बहुत असामान्यताएं हैं। ज्ञात हो, बच्चों की रोग प्रतिरोधिता और फेफड़े पूरी तरह से विकसित नहीं होते हैं। जाहिर है, प्रदूषण युक्त हवा में सांस लेने से बच्चों के फेफड़ों में विकृति आती रहती है जिसका असर उनके बड़े होने पर दिखाई देता है।

कुछ मतभेदों के बावजूद, कई विश्लेषण लगातार यह दिखाते हैं कि स्वास्थ्य बर्डन और जनसंख्या के स्वास्थ्य पर वायु प्रदूषण का प्रभाव सब से ज्यादा है। वायु प्रदूषण का एक्सपोज़र बढ़ते हुए अस्पतालों के खर्चों के साथ-साथ विकलांगता, असमय एवं शीघ्र

मृत्यु, श्वसन रोग, हृदय रोग, स्ट्रोक, फेफड़ों का कैंसर और मधुमेह आदि के साथ ही संचारी निमोनिया जैसे रोग से ज़ुड़ा हुआ है। दुनिया भर में 90 प्रतिशत से अधिक लोग विश्व स्वास्थ्य संगठन के स्वस्थ हवा के तय दिशानिर्देश की सीमा से ज़्यादा ख़राब क्षेत्रों में रहते हैं। आधे से ज्यादा लोग ऐसे इलाकों में रहते हैं जो विश्व स्वास्थ्य संगठन के कम से कम कठोर वायु गुणवत्ता लक्ष्य को भी पूरा नहीं करते हैं। सन 2017 ई० में पार्टिकुलेट मैटर 2.5 के प्रदूषण ने लगभग 30 लाख लोगों की प्रारंभिक मौतों में योगदान दिया। इस बीमारी का आधे से अधिक बोझ चीन और भारत में रहने वाले लोगों पर पड़ा। सन 2017 ई० में ही लोगों में उच्च रक्त शर्करा और उच्च शरीर द्रव्यमान सूचकांक के बाद टाइप 2 मधुमेह से होने वाली मृत्यु और विकलांगता-समायोजित जीवन के वर्षों के लिए पार्टिकुलेट मैटर 2.5 का प्रदूषण जोखिम का प्रमुख कारक था। इसी वर्ष दुनिया भर में ओजोन प्रदूषण के कारण लगभग 5 लाख शुरुआती मौतें हुईं। यह संख्या सन 1990 ई० से 20 प्रतिशत अधिक है और अधिकांश वृद्धि पिछले एक दशक में देखी गई है।

घरेलू वायु प्रदूषण विशेष रूप से कम-विकसित देशों में भारी क्षति के साथ मौत और दुनिया भर में विकलांगता का एक प्रमुख कारण है। कम विकसित देशों को घरेलू और परिवेशीय वायु प्रदूषण से दोहरे बोझ का सामना करना पड़ता है। वायु प्रदूषण ने दुनिया भर में औसत जीवन प्रत्याशा को 1 वर्ष और 8 महीने कम कर दिया है, जो कि भारत में 2.6 वर्ष है। जाहिर है, वायु प्रदूषण का धूम्रपान की तरह एक वैश्विक प्रभाव है। इसका मतलब है कि वायु प्रदूषण के अभाव में अनुमानित आज पैदा हुआ बच्चा औसतन 20 महीने पहले ही मर जाएगा। वायु प्रदूषण विश्व स्तर पर जनसंख्या स्वास्थ्य के लिए सबसे अधिक 5 जोखिम कारकों में से एक है, जो दुनिया भर के लोगों के जीवन को औसतन 20 महीने तक छोटा कर रहा है। इस जोखिम और स्वास्थ्य के बर्डन अर्थात बोझ को कम करने के लिए सरकार और वैज्ञानिक काम कर रहे है, जिस में प्रगति भी हो रही है, परन्तु भारत एवं चीन जैसी जगहों पर अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

SUBSCRIBE

India's Best Environment & Rural Development Magazine

हमारा भूमंडल

A MAGAZINE FOR ENVIRONMENT AND RURAL DEVELOPMENT

ORDER FORM

Yes! Please Renew/Enter my subscription of 'Hamara Bhumandal'. Please (√) mark the appropriate box. The cover price of this magazine is **Rs. 100/- only.**

☐ My existing subscription No. .... ☐ I am a NEW subscriber.

Term	By Ordinary Post	By Speed Post/Courier
☐ Life Time	₹ 20,000/-	₹ 30,000/-
☐ 5 years	₹ 4,500/-	₹ 6,500/-
☐ 3 years	₹ 2,700/-	₹ 4,200/-
☐ 1 year	₹ 1,100/-	₹ 1,500/-

Subscription Outside India

Annual : $ 200

Life Membership : $ 5,000

The magazine should be mailed to :

Name : ____________________

Current Subscription No. (If renewing) ____________________

Address : ____________________

____

City : __________ Pin : ☐☐☐☐☐☐ State : __________ E-mail : __________

Cheque*/DD No. __________ Dated : __________ for Rs. : __________

drawn on ____________________ favouring : **Hamara Bhumandal**

*(Please add Rs. 20/- for cheques not drawn on Kurukshetra).

Signature : ____________________ Date : ____________________

Please mail this coupon to : **'Hamara Bhumandal', 30, Sector-13, Urban Estate, Kurukshetra-136118 (Haryana)**
Mob. : +91 94160 36002, **e-mail :** info@hamarabhumandal.com, hamarabhumandal@gmail.com
Web. : www.hamarabhumandal.com

नरेश कुमार शर्मा

फसलों के अवशेषों के निपटान के लिए चाहिए सरकारी संस्थागत मशीनरी का सहयोग

कृषि-क्षेत्र दुनिया के समग्र आर्थिक विकास में एक प्रमुख भूमिका निभाता है। कृषि क्षेत्र की समस्याओं को दूर किए बिना देश की अर्थव्यवस्था को गति नहीं दी जा सकती है। परन्तु, भारत में नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल के निर्देशों के आने से पहले तक फसलों के अवशेषों एवं कृषि अपशिष्टों के प्रबंधन पर बहुत ही कम चर्चा होती थी। देश के बहुत से कृषि महाविद्यालयों और कृषि विश्वविद्यालयों में कुछ वर्ष पहले तक फसलों के अवशेषों के प्रबंधन पर कोई विषय भी पढाया ही नहीं जा रहा था। यह भी सच है कि कृषि अपशिष्ट नगरपरिषदों के ठोस अपशिष्ट प्रबंधन की तरह विनियमित नहीं है। नगरपरिषदों का ठोस अपशिष्ट मुख्य रूप से नगर निगमों जैसी सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा शासित होता है, जबकि कृषि अपशिष्ट मुख्य रूप से कृषि भूमि के मालिकों द्वारा नियंत्रित किया जाता है जो मुख्य रूप से निजी क्षेत्र में आते हैं, जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र की कम भागीदारी होती है। विकासशील देशों में भोजन की बढ़ती मांग के कारण दुनिया भर में खाद्य उत्पादन में जबरदस्त वृद्धि हुई है। कृषि गतिविधियों की बहुलता के कारण उत्पादित कृषि उत्पादों की मात्रा में तो वृद्धि हुई ही है, इससे पर्यावरण प्रदूषण और अपशिष्ट उत्पादन में भी कुल मिलाकर जबरदस्त वृद्धि हुई है।

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, कृषि अपशिष्ट में आमतौर पर खेतों, पोल्ट्री घरों और बूचड़खानों की खाद एवं अन्य अपशिष्ट; बर्बाद हुई उपज; खेतों से बहा हुआ उर्वरक; पानी, हवा या मिट्टी में प्रवेश हुए कीटनाशक; और खेतों से निकली नमक एवं गाद आदि

शामिल हैं। फसल की कटाई के बाद शेष बचा हुआ अपशिष्ट जिसे कृषि क्षेत्र या बाग में ही छोड़ दिया जाता है, फसल अवशेष के रूप में अधिक लोकप्रिय है, को फसल अवशेषों में शामिल किया जाता है। डंठल और ठूंठ खूंटी, पत्ते और बीज की फली फ़सल अवशेषों के कुछ सामान्य और गन्ने की बगास एवं सीरा प्रक्रिया से निकले अवशेष इस के कुछ अच्छे उदाहरण हैं।

केंद्रीय नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय के अनुसार, भारत प्रति वर्ष औसतन 500 मिलियन टन फसलों के अवशेष पैदा करता है। हालांकि, फसल अवशेषों का अधिकांश हिस्सा चारे के रूप में, ईंधन के रूप में, अन्य घरेलू और औद्योगिक उद्देश्यों के लिए उपयोग हो जाता है। परन्तु, आज भी 140 मिलियन टन कृषि अवशेषों में से प्रत्येक वर्ष 92 मिलियन टन अवशेषों को जलाया ही जाता है। यह भी गौर करना दिलचस्प होगा कि भारत में अपशिष्ट के रूप में जो कृषि अवशेष जलाए जाते हैं, उनकी मात्रा भारतीय उपमहाद्वीप के आसपास के अन्य कई देशों के कृषि अपशिष्ट के कुल उत्पादन से भी बहुत ज्यादा होती है।

यद्यपि, फसल अवशेषों को विभिन्न कृषि-आधारित अनुप्रयोगों और अन्य औद्योगिक प्रसंस्करण में लाभप्रद रूप से उपयोग किया जा सकता है परन्तु, इस तरह के कचरे के संग्रह, प्रसंस्करण और परिवहन की लागत इस के लाभकारी उपयोग की तुलना में बहुत अधिक हो जाती है। इन्हीं आर्थिक कारणों से कृषि अपशिष्टों के स्थायी उपयोग और भारत में पैदा हुई पर्यावरणीय अराजकता को रोका गया है। भारत के अलावा अन्य देशों के लिए यह विषय दो कारणों से महत्वपूर्ण है, पहला, फसलों के अवशेष कृषि अपशिष्टों का एक महत्वपूर्ण घटक है जो वास्तव में इसकी जैविक संरचना के कारण समाज के लाभ के

लिए उपयोग किया जा सकता है। दूसरा महत्वपूर्ण कारण अस्थिर प्रबंधन प्रथाओं के चलते फसलों के अवशेषों को जलाने से उच्च प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभाव पैदा होता है। ज्ञात हो, भारत दुनिया में चावल और गेहूं का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है और दो फसलों से यहां बहुत बड़ी मात्रा में कृषि अवशेषों का उत्पादन होता है।

यह एक दुखद विषय है कि पर्याप्त स्थायी प्रबंधन प्रथाओं के अभाव में, भारत में हर साल बहुत ज्यादा कृषि अवशेषों को जलाया जाता है, जिससे वातावरण में अत्यधिक सूक्ष्म कणों का उत्सर्जन और बेतहाशा वायु प्रदूषण होता है। फसलों के अवशेष जलाना यहां एक बड़ी पर्यावरणीय समस्या बन गई है, जो स्वास्थ्य के मुद्दों के साथ-साथ ग्लोबल वार्मिंग में भी योगदान दे रही है। फसलों के अवशेष से खाद, जैव-उत्पादन और मशीनीकरण से खेतों में ही उनका निष्पादन करना कुछ प्रभावी टिकाऊ तकनीकें हैं जो मिट्टी में फसल अवशेषों में मौजूद पोषक तत्वों को बनाए रखते हुए समस्या को रोकने में मदद कर सकती हैं। भारत सरकार ने फसल अवशेषों को ऊर्जा में परिवर्तित करने की स्थायी प्रबंधन विधियों को बढ़ावा देने के कई उपायों और अभियानों के माध्यम से इस समस्या को कम करने का प्रयास किया है। हाल के वर्षों में, विशेष रूप से सन 2015 ई० के बाद के वर्षों में दिल्ली और भारत के उत्तरी क्षेत्रों में कृषि अवशेषों के जलाने के कारण वायु प्रदूषण के स्तर में खतरनाक वृद्धि के संकेत से पता चलता है कि यह समस्या अभी तक नियंत्रण में नहीं आई हैं। फसलों के अवशेषों को जलाने से रोकने का समाधान सरकार के हस्तक्षेप और नीतियों के साथ स्थायी प्रबंधन प्रथाओं के प्रभावी कार्यान्वयन में निहित है। कृषि अपशिष्ट और फसलों के अवशेष को अन्य क्षेत्रों जैसे नगरपालिका ठोस अपशिष्ट एवं सीवेज़ अपशिष्ट प्रबंधन जैसे कुछ उदाहरणों से काफी फायदा हो सकता है। यहां एक परिचालन प्रणाली के तहत कचरे का संग्रह, अलगाव, रीसाइक्लिंग और निपटान का कार्य संस्थागत मशीनरी द्वारा किया जाता है। इसी तरह का तकनीकी समाधान फसलों के अवशेषों के निपटान में भी किया जा सकता है।

भले ही फसलों के अवशेषों को जलाने का

मुद्दा पर्यावरण, कृषि, अर्थव्यवस्था, सामाजिक पहलुओं, शिक्षा और ऊर्जा जैसे कई क्षेत्रों को छूता हो, लेकिन पिछले सरकारी प्रयास मुख्य रूप से कृषि और ऊर्जा के इर्द-गिर्द ही घूमते रहे। यह क्षेत्रीय सोच इस के समाधान में एक और अवरोध है जिसे तोड़ने की जरूरत है। भारत सरकार के साथ-साथ अन्य विकासशील देशों की सरकारें भी पर्यावरण संसाधनों के प्रबंधन में मेल-जोल की सोच की अवधारणा से लाभान्वित हो सकती हैं। मेल-जोल की सोच एक उच्च-स्तरीय एकीकरण और उच्च स्तर के हितधारक भागीदारी को बढ़ावा देती है जो फसलों के अवशेष जलाने जैसे मुद्दों को हल करने के लिए एक सहायक मंच प्रदान करती है।

हाल ही में भारत सरकार ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सहयोग से फसल अवशेष प्रबंधन पर दिल्ली में एक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन का उद्घाटन केंद्रीय कृषि और किसान कल्याण राज्य मंत्री श्री परषोत्तम रुपाला ने किया। सम्मेलन में पंजाब, दिल्ली, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के 1,000 से अधिक किसानों ने भाग लिया, जिन्होंने मूल स्थान पर ही फसल अवशेष प्रबंधन के लिए अपनाए गए अभिनव विचारों, अनुभवों और सुझावों को साझा किया। यह सम्मेलन किसानों और राज्य सरकारों की चिंताओं को ध्यान में रखते हुए आयोजित किया गया था। कृषि और किसान कल्याण राज्य मंत्री ने सभी किसानों से आग्रह किया कि वे यह सुनिश्चत करें कि किसी भी गांव में एक भी किसान बिलकुल भी फसल अवशेष न जलाये। उन्होंने किसानों से अनुरोध किया कि वे भविष्य में भी अपना समर्थन और अपने विचारों का आदान-प्रदान करने का प्रयास करे ताकि इन राज्यों की सफलता की कहानियों को दूसरे किसानों के साथ साझा किया जा सके। उक्त सम्मेलन कृषि समुदाय के बीच जागरूकता पैदा करने के अलावा फसलों के अवशेष जलाने की समस्या को कम करने में बहुत सहयोग करेगा। नई दिल्ली में आयोजित हुए फसल अवशेष प्रबंधन के इस राष्ट्रीय सम्मेलन में पंजाब के 400 से अधिक अभिनव और प्रगतिशील किसानों ने भाग लिया।

फसल अवशेष जलाने से उत्पन्न होने वाले जनस्वास्थ्य के खतरों एवं कृषि कल्याण व स्थिरता के विभिन्न मुद्दों को देखते हुये, भारत के प्रधानमंत्री ने एक उच्च स्तरीय टास्क फोर्स का गठन किया था। इस टास्क फोर्स के गठन का उद्देश्य उत्तर-पश्चिमी भारत के राज्यों जैसे पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश एवं दिल्ली के राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में फसल अवशेषों का यथा स्थान प्रबंधन हेतु उपयुक्त सुझाव एवं मार्गदर्शन देना था। टास्क फोर्स के सुझाव से सन 2018 ई० के दौरान, भारत सरकार ने लगभग 1150 करोड़ रूपये की 'फसल अवशेषों के खेत में प्रबंधन के लिए कृषि तकनीकीकरण का प्रोत्साहन' योजना बनाई, जिसमें लगभग 100 संस्थानों जिसमें कृषि विज्ञान केन्द्र, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थान, राज्य कृषि संस्थाएं, कृषि विश्वविद्यालय आदि को सम्मिलित करके किसानों के हित हेतु कृषि मशीनरी उपलब्धता के साथ-साथ उनके मध्य ज्ञान सांझा करना, जागरूकता अभियान चलाना एवं क्षमता विकास के विभिन्न आयाम सुनियोजित करना था।

कृषि मंत्रालय ने पंजाब, हरियाणा, दिल्ली और उत्तर प्रदेश राज्यों में सन 2018-19 से सन 2019-20 ई० तक की अवधि के लिए एक केंद्रीय क्षेत्र योजना लागू की है, जो वायु प्रदूषण के समाधान के लिए संबंधित राज्य सरकारों द्वारा किए गए प्रयासों का सहयोग करने और मूल स्थान पर फसल अवशेषों के प्रबंधन के लिए आवश्यक मशीनरी को सब्सिडी देने के लिए है। ज्ञात हो, चालू वित्त वर्ष में केंद्रीय निधियों का कुल व्यय 1151.80 करोड़ रूपये का है। पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश की राज्य सरकारों ने वर्ष 2018-19 के दौरान व्यक्तिगत स्वामित्व के आधार पर किसानों को 32,570 मशीनें वितरित की हैं और 7,960 कस्टम हायरिंग सेंटर की स्थापना की है।

परिणामस्वरूप, डॉ० नागेश सिंह की अध्यक्षता में गठित उच्च शक्ति समिति की रिपोर्ट के अनुसार, सन 2018 ई० में सन 2017 ई० और सन 2016 ई० की तुलना में पुआल/पराली जलाने की घटनाओं में क्रमशः 15 प्रतिशत और 41 प्रतिशत की कमी आई है। इस सम्मेलन के दौरान, पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के 20 किसानों को अभिनिर्धारित कृषि यंत्रों का उपयोग करके फसल अवशेषों के प्रबंधन में अपने बहुमूल्य योगदान देने और अपने गांव के अन्य किसानों को फसलों के अवशेषों को जलाने से रोकने एवं फसल अवशेषों का मूल स्थान पर प्रबंधन करने के लिए प्रेरित करने पर सम्मानित किया गया। कृषि राज्य मंत्री ने एक बहुभाषी मोबाइल ऐप 'सीएचसी फार्म मशीनरी' भी लॉन्च किया। इस ऐप के द्वारा किसान ५० किलोमीटर के क्षेत्र में कस्टम हायरिंग सर्विस सेंटरों से अभिनिर्धारित कृषि यंत्रों को किराये पर लेकर लाभ उठा सकते हैं। इस ऐप को गूगल प्ले स्टोर से किसी भी एंड्रॉइड फोन पर डाउनलोड किया जा सकता है।

इस बीच, पंजाब के कृषि सचिव काहन सिंह पन्नू ने फसल अवशेष जलाने के खतरे को रोकने के लिए प्रगतिशील किसानों के प्रयासों की सराहना करते हुए कहा कि पंजाब सरकार पहले ही फसल अवशेषों को जलाने की जांच के लिए बड़े पैमाने पर अभियान चला चुकी है। पन्नू ने कहा कि राज्य सरकार और विभिन्न विभागों के ठोस प्रयासों से पिछले वर्षों की तुलना में फसल अवशेष जलाना उल्लेखनीय रूप से कम हो गया है। उन्होंने कहा कि स्वच्छ, हरे और प्रदूषण मुक्त वातावरण को सुनिश्चित करने के लिए फसल अवशेषों के दुष्प्रभाव के बारे में हमारे किसानों को शिक्षित करने का यह महत्वपूर्ण समय है।

हरियाणा में फसल अवशेष जलाने वालों पर निगरानी के लिए अभी से ही सरकारी कर्मियों की ड्यूटी लगा दी गई है। अधिकारियों ने प्रत्येक गांव के लिए एक-एक कर्मचारी की ड्यूटी लगाई है। कर्मचारी फसल अवशेष जलाने वाले किसानों की रिपोर्ट तैयार कर कार्रवाई के लिए अधिकारियों को भेजेंगे। अक्टूबर माह में धान की कटाई का कार्य शुरू हो जाता है। कटाई के बाद खेतों में धान के करीब एक से दो फीट तक अवशेष बच जाते हैं। नवंबर माह में ही गेहूं की बिजाई का कार्य शुरू हो जाता है। गेहूं की बिजाई समय पर करने के लिए किसान खेतों में बचे फसल अवशेषों में आग लगा देते हैं। फसल के अवशेष जलाने से बहुत अधिक प्रदूषण फैलता है। धान के अवशेष जलाने से स्मॉग की समस्या पैदा हो रही है। स्मॉग के कारण सड़कों पर दृश्यता कम हो जाती है। वहीं धुएं के कारण सांस लेने में परेशानी होती है और आंखों में जलन होती है। फसल अवशेषों को जलाने से रोकने के लिए कृषि विभाग किसानों को जागरूक करेगा। अधिकारियों का कहना है कि खेतों में फसल अवशेष जलाने वाले किसानों पर सैटेलाइट से निगरानी रखी जाएगी।

नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश की राज्य सरकारों से पूछा है कि फसलों के अवशेष जलाने की समस्या से निपटने के लिए उनकी क्या योजना है? दिल्ली के वातावरण में बढ़ रहा वायु प्रदूषण वहां रहने वालों के लिए एक प्रमुख समस्या है। एनजीटी अध्यक्ष न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल की अध्यक्षता वाली पीठ ने उक्त तीन राज्यों को उक्त समस्या से निपटने के लिए 'रणनीति और प्रस्तावित कार्य योजना' का संकेत देते हुए प्रगति रिपोर्ट दाखिल करने को कहा है। एनजीटी ने अपने आदेश में कहा है कि संबंधित राज्य अपनी प्रगति रिपोर्ट भी दर्ज करा सकते हैं जिसमें मौजूदा वर्ष में समस्या से निपटने के लिए नियोजित रणनीतियों और कार्य योजना को भी शामिल किया जा सकता है।

न्यायाधिकरण का यह निर्देश समाचार पत्रों में छपी ख़बरों जिन में राष्ट्रीय राजधानी में वायु प्रदूषण और फसल अवशेषों के जलने के कारण खराब वायु गुणवत्ता के कारणों से हुई मौतों के संदर्भ में आया था। समाचारपत्रों एवं मीडिया की ख़बरों में कहा गया है कि

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में वायु प्रदूषण का 25 से 30 प्रतिशत पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और दिल्ली में फसल के अवशेषों के जलाए जाने के कारण होता है। न्यायाधिकरण ने गंगा लालवानी की एक याचिका जिसमें उसने फसल अवशेष जलाने से रोकने के लिए गरीब और सीमांत किसानों को मशीनरी प्रदान करने के लिए दिशा-निर्देश जारी करने की मांग की थी, पर सुनवाई करते हुए उक्त समाचार रिपोर्टों का उल्लेख किया। एनजीटी ने अपनी कार्यवाही में इस साल जून में कृषि मंत्रालय द्वारा पंजाब, हरियाणा, यूपी और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में साइट पर फसल अवशेषों के प्रबंधन के लिए कृषि यंत्रीकरण को बढ़ावा देने के संबंध में एक रिपोर्ट भी दर्ज की। योजना के तहत, अपेक्षित मशीनरी खरीदने के लिए सब्सिडी प्रदान की जाती है। इसके अलावा, उक्त केन्द्रीय कृषि मंत्रालय की रिपोर्ट में कुछ आवश्यक मशीनों को किराए पर देने और मक्का को धान की खेती के विकल्प के रूप में प्रयोग करने की योजना का उल्लेख किया गया है। इसमें कहा गया कि मक्का को मुख्य रूप से इथेनॉल और अन्य उत्पादों के लिए औद्योगिक अनुप्रयोगों में इसके उपयोग को प्रोत्साहन और उत्साहवर्धक विकल्प के रूप में प्रदान करके बढ़ावा दिया जा सकता है। मंत्रालय की रिपोर्ट में अन्य सिफारिशों में जैव ऊर्जा पैदा करने के लिए फसल अवशेषों का उपयोग, फसल को समय पर तैयार करने वाली मशीनरी को समय पर उपलब्ध कराना, ताकि बुवाई की अवधि के दौरान ये उपलब्ध रहें, कम अवधि के धान की किस्मों को प्राथमिकता देना और फसल अवशेष जलाने के खिलाफ मीडिया अभियानों को मजबूत करना शामिल है।

इस रिपोर्ट के अवलोकन के बाद, ट्रिब्यूनल ने कुछ सुझाव भी दिए, जिसमें इसरो के जिओपोर्टल 'भुवन' के साथ मिलकर एक ऐप विकसित करने की जरुरत है, जिसमें जब फसल अवशेष जल रहे हों तो ग्राम-स्तर के अधिकारी या स्थानीय पुलिस को सूचित किया जा सके। ट्रिब्यूनल ने यह भी कहा कि जैसा कि जंगल की आग के संबंध में किया जाता है हॉट-स्पॉट को मैप करने के लिए ड्रोन और सैटेलाइट इमेजरी का उपयोग कृषि मंत्रालय और संबंधित राज्यों द्वारा भी खोजा जा सकता है। ट्रिब्यूनल ने कहा, अंत में, निगरानी नेटवर्क को प्रभावी और अधिक सतर्क रहने की आवश्यकता है।

जानकारों का कहना है कि इस साल फसल अवशेष कम जलाए जाने की संभावना है जिससे दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में वायु प्रदूषण का स्तर गिर सकता है। फसलों के अवशेष जलने से यहां बहुत बड़े पैमाने पर वायु प्रदूषण फ़ैल जाता है जिससे यहां एक चिकित्सीय आपातकाल जैसी स्थिति बन जाती है जिसमें लोगों को घर के अंदर ही बंद रहना पड़ता है। यदि उन्हें बाहर निकलना भी पड़े तो उस सूरत में उनको मास्क का उपयोग करने की सलाह दी जाती है। परन्तु, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने कहा है कि प्रौद्योगिकी के व्यापक उपयोग से अब खेतों की फसलों के अवशेषों को काटकर उनके पोषक तत्वों को मिट्टी में मिलाने की पहल हो चुकी है जिसके चलते इस साल उत्तर भारत में फसलों के बहुत ही कम अवशेष जलाए जायेंगे लिहाजा, राजधानी दिल्ली में इस बार कम वायु प्रदूषण होगा। ज्ञात हो, प्रत्येक वर्ष अक्टूबर के महीने के आसपास किसान अपनी फसलों विशेषकर धान की फ़सल के अवशेषों का निपटारा करने के लिए उनको आग लगाकर जलाते हैं जिससे हवा में पार्टिकुलेट मैटर की मात्रा 50 माइक्रोग्राम की सुरक्षित सीमा को पार कर 1,000 माइक्रोग्राम प्रति क्यूबिक मीटर तक हो जाती है। वातावरण की यह स्थिति एक मेडिकल इमरजेंसी की भांति हो जाती है, जिसमें लोगों को घर के अंदर रहने और मास्क पहन कर बाहर निकलने की सलाह दी जाती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का अनुमान है कि इस साल हरियाणा में फसलों के अवशेष जलने की बहुत ही कम घटनाएं होंगी और यह फ़सल-अवशेषों को जलाने से मुक्त राज्य होगा। लेकिन, पंजाब और उत्तर

प्रदेश में किसान इस प्रवृति से पूरी तरह से मुक्त नहीं होंगे। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के महानिदेशक श्री त्रिलोचन महापात्र का कहना है कि वे किसानों, राज्य सरकारों और सार्वजनिक संस्थानों के साथ मिलकर काम कर रहे हैं, और उनके हस्तक्षेप के बाद स्थिति में व्यापक सुधार हुआ है। उन्होंने बताया कि धान की कटाई और गेहूं की बुवाई के बीच की बहुत ही कम अवधि होने की वजह से पारंपरिक गेहूं की बुवाई के कारण हरेक साल अक्टूबर-नवंबर में धान के खेतों में लगभग 23 मिलियन टन फसलों के अवशेष जलाए जाते हैं। यदि मानसून आने में देरी हो जाए तो किसानों को सर्दियों की फसलों के लिए खेत खाली करने के लिए वहां पड़े फसल अवशेषों को आग में ही जलाना पड़ता है।

श्री महापात्र ने कहा कि पिछले साल प्रधानमंत्री द्वारा स्थापित एक उच्च-स्तरीय टास्क फोर्स मासिक आधार पर राजधानी दिल्ली की वायु गुणवत्ता सूचकांक की निगरानी कर रहा है। राज्यों के मुख्य सचिवों और संबंधित विभागों के सचिव भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधिकारियों के साथ हर महीने स्थिति की समीक्षा करते हैं और सुधारात्मक कार्रवाई करते हैं। जाहिर है, इस बार वायु प्रदूषण के सूचकांक में काफी सुधार होगा।

जहां, हम में से कई लोग इस प्रदूषण से बचने के लिए मास्क लगा लेते हैं, वहीं कुछ ऐसे भी लोग हैं जो इस व्यापक समस्या के समाधान की तलाश में एक कदम आगे जा रहे हैं। दिल्ली की कक्षा 12 की दो 17 वर्षीया छात्राएं केतकी त्यागी और श्रुति सूद ने 'हैप्पी सीडर, हैप्पी लंग्स' नामक एक क्राउडफंडिंग अभियान शुरू करके इस क्षेत्र में वायु प्रदूषण का मुकाबला करने का बीड़ा उठाया है। दिल्ली की इन दो लड़कियों ने इस पहल के माध्यम से 2018 में तीन महीनों के अंदर 3.5 लाख रुपये से अधिक जुटाने में कामयाबी हासिल की है। उन्होंने इस पैसे का इस्तेमाल ऐसी मशीनों को खरीदने के लिए किया है जो पराली को उर्वरक में बदल सकती हैं। इन मशीनों को उन्होंने हरियाणा के झज्जर में मातेनहाल गाँव के किसानों को डिस्ट्रीब्यूट कर दिया। फसल अवशेषों को खत्म करने के लिए ईको-फ्रेंडली समाधान प्रदान करने के अलावा, इन दोनों छात्राओं ने जागरूकता सत्रों का आयोजन करके किसानों को पराली जलाने के हानिकारक प्रभावों के बारे में शिक्षित किया।

पिछले वर्ष केतकी और श्रुति ने 'केटो' प्लेटफॉर्म पर तीन मशीन खरीदने के लिए एक क्राउडफंडिंग अभियान शुरू किया। दोनों ने 'हैप्पी सीडर' तकनीक को सर्दियां के दौरान जलाई जाने वाली पराली की समस्या से निपटने के तौर पर देखा। यह मशीन पंजाब एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी के इंजीनियरों के एक समूह द्वारा विकसित की गई है जो मिट्टी से फसल के अवशेषों को काटती है, उन्हें गलाती है और यहां तक कि इनके स्थान पर नए बीज भी बोती है। सभी किसानों को अपने ट्रैक्टर पर यह डिवाइस लगाकर चलाना होता है। इस मशीन ने कई समस्याओं को हल किया है। इसने न केवल पराली को जलाने से रोकने के लिए एक कुशल और टिकाऊ तरीका पेश किया है, बल्कि गेहूं की फसलों की समय पर बुवाई भी सुनिश्चित की है। इसके अलावा, किसानों ने यह भी महसूस किया है कि मशीन अवशेषों को गीली घास में परिवर्तित करने में सक्षम है, इसलिए फसलों के लिए उर्वरक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। जिन खेतों में इस मशीन का उपयोग किया गया वहां गेहूं की औसत उपज 43.3 क्विंटल/हेक्टेयर रही है, जबकि पारंपरिक तरीकों का उपयोग करने वाली औसत उपज थोड़ी सी ज्यादा लगभग 43.8 क्विंटल/हेक्टेयर रही। हैप्पी सीडर्स का उपयोग करके बुवाई के लिए खेत तैयार करने की औसत लागत 6,225/हेक्टेयर आती है। जबकि, पारंपरिक तरीकों को लागू करने पर यह लागत 1,000 रुपये ज्यादा 7,288 रुपये/हेक्टेयर आती है।

गत वर्ष हरियाणा में 459 स्थानों पर पराली जलाने के मामले सामने आये थे। किसानों

द्वारा पराली न जलाने के लिए सरकार की विभिन्न एजेंसियों ने व्यापक सूचना एवं शिक्षा अभियान चलाया था। जिसके बड़े ही सकारात्मक परिणाम रहे थे। उक्त अभियान में उपायुक्तों, उपमंडल अधिकारियों और अन्य अधिकारियों ने गांव-गांव जाकर किसानों को जागरूक व प्रेरित किया था। इसके अतिरिक्त राज्य सरकार ने खेत में ही फसल अवशेष प्रबंधन के लिए मशीनीकरण को बढ़ावा देने हेतु फसल अवशेष प्रबंधन पर नई केंद्रीय योजना के तहत राज्य व जिला स्तरीय निगरानी समितियों का गठन किया था। हरियाणा में फसलों के अवशेष जलाने वाले किसानों पर प्रथम घटना पर 2 एकड़ तक 2,500 रुपए, 2 से 5 एकड़ तक 5,000 रुपए तथा 5 एकड़ से ज्यादा भूमि वाले किसान पर 15,000 रुपए का जुर्माना करने का प्रावधान है।

भारत सरकार ने फसलों के अवशेष जलाने पर रोक लगाने और वायु-प्रदूषण को रोकने के लिए बायोगैस संयंत्र स्थापित करने का एक प्रगतिशील कदम भी उठाया है। बायोगैस प्रौद्योगिकियां सन1970 के दशक से प्रचलन में हैं और इनके कई कार्यक्रम राष्ट्रीय बायोगैस तथा खाद प्रबंधन कार्यक्रम-ऑफ ग्रिड बायोगैस बिजली उत्पादन कार्यक्रम द्वारा चलाए जा रहे हैं ताकि बिजली उत्पादन, खाना पकाने और प्रकाश व्यवस्था के लिए अक्षय ऊर्जा प्रदान की जा सके। ये कार्यक्रम सरकार द्वारा 'वेस्ट टू एनर्जी मिशन' के तहत लागू किए गए थे। यह जलवायु परिवर्तन पर भारत की कार्य योजना का एक हिस्सा भी है। बड़े पैमाने पर औद्योगिक बायोगैस संयंत्र ५००० घन मीटर प्रति दिन बायो गैस उत्पन्न करते हैं। देश में 5.5 मेगावाट की बिजली उत्पादन क्षमता के साथ लगभग ४०० ऑफ-ग्रिड बायोगैस बिजली संयंत्र स्थापित किए गए हैं। वर्तमान में भारत में ५६ बायोगैस आधारित बिजली संयंत्र चालू हैं, उनमें से अधिकांश महाराष्ट्र, केरल और कर्नाटक राज्यों में हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे परिवार स्तर के बायोगैस संयंत्र भी शुरू किए गए हैं, जो प्रति दिन १ से १० घन मीटर बायोगैस उत्पन्न कर सकते हैं। बायोगैस विकास कार्यक्रम के तहत नई और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय द्वारा लगभग पांच मिलियन परिवार स्तर के बायोगैस संयंत्र लगाए गए हैं।

प्रौद्योगिकी के हालिया विकास और घटनाक्रम के एक एकीकृत दृष्टिकोण में बायोगैस उत्पादन के लिए गोबर एवं सब्जियों के कचरे के अलावा धान के पुआल तथा अन्य फसलों के अवशेषों का उपयोग करने की संभावना को खोल दिया है।

उरजा अर्थात अर्बन ज्योति अभियान के तहत भी बायोगैस संयंत्र स्थापित करने की सूचना है, जो वाणिज्यिक खेतों और प्रसंस्करण इकाइयों के साथ हरित ऊर्जा की दिशा में एक नवीन पहल के रूप में पंजाब के फाजिल्का में स्थापित किया गया है। यह संयंत्र जैव मिथेनेशन तकनीक के माध्यम से चावल के भूसे का उपयोग करके बायोगैस बनाता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली और पंजाब कृषि विश्वविद्यालय जैसे प्रमुख शैक्षणिक संस्थानों द्वारा प्रमाणित बायोगैस संयंत्र 10 टन कृषि अवशेषों से लगभग 4000 घन मीटर बायोगैस उत्पन्न करता है। एक अन्य बायोगैस उद्यम में, एक 12 मेगावाट चावल-भूसे का बिजली संयंत्र लगभग 15,000 किसानों से 120,000 टन फसलों के अवशेषों का उपभोग कर सकता है। इन निजी उद्यमों ने खेती पर आधारित आबादी के लिए लगभग 700,000 नौकरियां पैदा की हैं। जैव-गैस संयंत्रों जैसे द्वितीयक उपयोगकर्ता किसानों को किसानों को 600 रुपये से 1600 रुपये प्रति टन भूसे की पेशकश करते हैं। सरकारी एजेंसियों और निजी क्षेत्रों द्वारा लागू किए गए इन उपायों के माध्यम से, फसलों के अवशेष जलाने की प्रथा अवश्य कम हुई है, लेकिन पूरी तरह से बंद नहीं हुई है।

Save Environment

R. P. OVERSEAS

An ISO - 9001-2008 Certified Company

Govt. of India Recognised Export House

(Mfr & Exporter : Home Furnishings, Polar Fabrics & Made - ups)

Regd. Office: Opp. Flora School, Sector 29-II, Panipat - 132104, Haryana

Tel.: 91 180 6451274

Email: rp@rp-overseas.com | Web : www.rp-overseas.com

डॉ. गीता कौशिक

हिंसा एवं प्रदूषण के जनक हैं बुचडखाने, सरकार क्यों दे रही है संरक्षण?

भारत के केन्द्रीय कृषि मंत्रालय की एक रिपोर्ट के अनुसार हमारे देश में 70 प्रतिशत से ज्यादा लोग मांसाहारी हैं। इन मांसाहारी लोगों का आहार जुटाने में देश के कई करोड़ पशुओं की बलि चढ़ जाती है। देश में वैध एवं अवैध रूप से चल रहे कई लाख छोटे-बड़े बूचड़खानों में प्रत्येक वर्ष करोड़ों पशु और पक्षी काटे जाते हैं। हालांकि यहां पर केवल 5520 बूचड़खाने ही वैधानिक तथा संगठित क्षेत्र में हैं जबकि छोटे एवं बड़े पशुओं को किसी भी गली के नुक्कड़, घर के पिछवाड़े या गांव की अवैध कत्लगाहों में ही काट लिया जाता है। हालांकि देश में अवैध बूचड़खाना चलाना एक दण्डनीय अपराध है लेकिन सरकार की ढीली नीतियों और जनचेतना के अभाव में यह धन्धा निरंतर चल रहा है।

भारत सरकार अपने दो मंत्रालयों के माध्यम से नया बूचड़खाना खोलने के लिए लाईसेंस और 75 प्रतिशत तक की आर्थिक सहायता देती है। एक मंत्रालय तो केन्द्रीय कृषि मंत्रालय ही है जिसके 'पशुपालन विभाग' में मांस एवं मांस आधारित उद्योग का एक अलग अनुभाग है जिसे संयुक्त सचिव तथा आयुक्त स्तर के अधिकारी देखते हैं। इस अनुभाग में तैनात एक अधिकारी के अनुसार कृषि मंत्रालय मध्यम एवं ग्रामीण स्तर के छोटे बूचड़खानों को खोलने के लिए ही आर्थिक सहायता देता है। उनके अनुसार इस मंत्रालय ने हाल ही में देश भर में ऐसे कई नए बूचड़खाने खोलने की अनुमति भी दी है। दूसरा मंत्रालय केन्द्रीय खाद्य प्रसंस्करण का मंत्रालय है जहां बड़े बूचड़खानों को खोलने और उन्हें चलाने के लिए भारी आर्थिक मदद दी जाती है। यह सबसीडी 30 लाख से 2 करोड़ रुपये प्रति बूचड़खाना हो सकती है। बीते दो वर्षों में इस मंत्रालय ने कई नए बूचड़खाने खोलने के लिए लगभग 250 करोड़ रुपये का आर्थिक अनुदान दिया। उल्लेखनीय है कि यह मंत्रालय एक नया बूचड़खाना खोलने के लिए 50 से 75 प्रतिशत तक का आर्थिक अनुदान देता है जो लगभग 15 करोड़ रुपये तक हो सकता है।

अपने देश में पहले एक ऐसा कानून था जिसके तहत 16 वर्ष से कम आयु के पशु को मांस के लिए काटना बिल्कुल वर्जित था। परन्तु अब तो निर्यात के लिए इस कानून में भी बदलाव कर दिया गया है। अब भारत में 4 महीने से लेकर 1 वर्ष तक के जानवर को भी काटने की अनुमति है। इस व्यवसाय में लगे लोगों को बूचड़खाने में एक गाय या भैंस जैसे पशु को काट कर उसके मांस से लगभग 20 हजार रुपये मिल जाते हैं जबकि अपने 18 वर्ष के जीवन काल में एक गाय या भैंस अपने दूध, घी और गोबर इत्यादि के रूप में कम से कम 5 लाख रुपये अपने मालिक को देती है। जाहिर है, बूचड़खानों में एक पशु को काट एवं उसका वध करके देश को 4 लाख 80 हजार रुपये का सीधा नुकसान पहुंचाया जा रहा है। पशुओं का मांस निर्यात करके देश के कुछ उद्यमी विदेशी मुद्रा तो अवश्य कमा लेते हैं परन्तु भारत को इस विदेशी मुद्रा से भी कई गुणा ज्यादा राशि का दूध पाउडर, यूरिया व अन्य रसायनिक खादों का आयात करना पड़ रहा है। सबसे दुखद बात तो यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारत के जानवरों के मांस की कीमत विकसित देशों के जानवरों की तुलना में 40 प्रतिशत कम ही लगाई जाती है। ऐसे में प्रश्न उठता है कि जब भारतीय पशुओं की कीमत विकसित देशों की तुलना में महज 40 प्रतिशत तक ही है तो भारत सरकार ऐसे उद्योग को क्यों बढ़ावा दे रही है? इस पर सरकार की यह दलील है कि यदि वह पशुओं का वध करने की अनुमति न दे तो उनकी संख्या बहुत ज्यादा बढ़ जाएगी। जबकि सच्चाई इसके विपरीत है क्योंकि उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार देश में पशुओं की संख्या तेजी से घट रही है।

यह हैरानी की बात है कि यूरोप व दुनिया के अन्य विकसित देशों में जहां मांसाहार ही मुख्य भोजन था, वहां अब अधिकांश लोग शाकाहारी बन रहे हैं। संभवतः उन्हें पता चल गया है कि मांस खाने

से मनुष्य को कितनी जानलेवा बीमारियां हो जाती हैं। 'स्वाइन-फ्लू' से लेकर 'सार्स' एवं 'मैड काऊ' जैसी अनेक जानलेवा बीमारियां पशु-पक्षियों से ही उत्पन्न होकर मनुष्यों में आती हैं। इसीलिए तो इंग्लैण्ड में 1980 के बाद एक भी नया बूचड़खाना नहीं खोला गया है जबकि भारत सरकार ऐसे तमाम तरह के कत्लगाहों को न केवल प्रोत्साहित कर रही है बल्कि उन्हें आर्थिक अनुदान भी दे रही है। यहां तो पुराने बूचड़खानों को भी आधुनिक बनाने के लिए सरकारी तौर पर आर्थिक सहायता दी जा रही है।

हमारा देश भारत तो अनादिकाल से ही एक अहिंसक देश रहा है। यहां का पशुपालक अपने पशुओं से असीम स्नेह करता है। वह आज भी उन्हें अपने परिवार का एक हिस्सा समझता है। यहां खेती और पशुधन एक-दूसरे के पूरक हैं। फिर भारत में बूचड़खाने खोलने की प्रक्रिया कब और क्यों आरम्भ हुई? संभवतः अंग्रेजी हकुमत के समय बूचड़खाने ज्यादा तादाद में खोले गए और आजादी के बाद भी उनकी संख्या में वृद्धि होती गई। देश के 10 प्रतिशत बूचड़खानों को छोड़ कर सभी को पिछली शताब्दी के पूर्वार्द्ध में स्थापित किया गया था। वे नगर-परिषदों और नगर-निगमों के स्वामित्व में रखे गए थे। नगर-निगमों और नगर-परिषदों का यह दायित्व था कि जन स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए वे शहरी परिधी से बाहर ही बूचड़खाने स्थापित करवाएं। आजादी के बाद देश में नगर-परिषदों एवं नगर-निगमों ने शहरी सीमा के भीतर 2800 वैध एवं लाईसेंसी बूचड़खाने खोलकर उन्हें पंजीकृत किया और उनका रख-रखाव भी उन्होंने स्वयं ही संभाला। दूसरी ओर, देश में अवैध बूचड़खानों की संख्या तेजी से बढ़ती गई।

बूचड़खानों में पशुओं का ही वध नहीं होता है बल्कि देखा जाए तो वहां मानवता का भी वध होता है। वैसे भी जिस देश में मांस, शराब, अण्डे और मछलियों आदि को बेच कर धन कमाया जाता हो, वह देश कभी भी सार्थक एवं स्तरीय उन्नति नहीं कर सकता है क्योंकि हिंसा से कमाई गई दौलत से विकास नहीं होता है बल्कि उससे तो हिंसा ही फैलती है। बूचड़खानों में पशुओं पर होने वाले अत्याचार को देखकर एक सामान्य व्यक्ति की रूह तक कांप जाती है। किसी ने ठीक ही कहा है कि यदि बूचड़खानों की दीवारें पारदर्शी शीशों की बना दी जाएं तो विश्व का एक व्यक्ति भी मांस नहीं खा सकेगा और तमाम लोग शाकाहार की ओर लौट आएंगे। परन्तु ऐसा होना संभव नहीं है क्योंकि बूचड़खानों को तो ऊंची-ऊंची दीवारों के बीच में ही इसलिए बनाया जाता है ताकि कोई बाहरी व्यक्ति वहां पर ताक झांक न कर सके।

पशुओं का वध करने के लिए उन्हें बड़ी क्रूरता से बूचड़खानों में लाया जाता है। वहां पर पहले से ही वध के लिए हजारों जानवर मौजूद होते हैं। इन कत्लगाहों में पशुओं को मारने से पहले उन्हें औसतन 4 दिनों तक भूखा व प्यासा रखा जाता है। चार दिनों के बाद उनकी टांगें तोड़ दी जाती हैं और आंखें भी फोड़ दी जाती हैं ताकि सरकार से यह प्रमाण-पत्र लिया जा सके कि उक्त पशु तो नाकारा हैं। चार दिनों तक पशुओं को भूखा और प्यासा रखने का एक दूसरा बड़ा कारण यह भी होता है कि भूखा रखने से पशुओं के खून में मौजूद 'होमोग्लोबिन' उनकी वसा में चला जाता है। उल्लेखनीय है कि जिस मांस में ज्यादा होमोग्लोबिन होता है अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में उसके दाम ज्यादा मिलते हैं। आधुनिक कहे जाने वाले बूचड़खानों में भी पशुओं पर इतना ज्यादा अत्याचार होता है कि उसे देखकर मानवता थर्रा जाती है। इन आधुनिक बूचड़खानों में हजारों गायों और भैंसों को बड़ी क्रूरता से मारा जाता है। मारने से पहले पशुओं को कत्लगाह ही 'कनवेयर बेल्ट' तक लाया जाता है और बेल्ट की चेन में पशुओं के एक-एक पैर को बांध कर लटका दिया जाता है। जाहिर है, ज्यादा वजन होने से उनकी टांगें टूट जाती हैं। उल्टा लटकाने के बाद इन पशुओं पर उबलता हुआ पानी डाला जाता है ताकि उनके शरीर पर चिपके हुए

कीटाणु मर जाएं। इसके बाद तमाम पशुओं का एक-एक करके गला काट दिया जाता है। पशु की 'जुगलर' नामक नाड़ी के कट जाने से उनका रक्त तेज धार बन कर नीचे गिरता है जिसे कत्लगाहों में मौजूद लोग इकट्ठा कर लेते हैं। सामान्यतः एक गाय में से लगभग 13.6 कि.ग्रा. रक्त निकलता है जबकि एक भैंस में से रक्त की मात्रा इससे थोड़ी सी ज्यादा होती है। यद्यपि पशुओं को कत्ल करने की इस प्रक्रिया में रक्त का ज्यादा महत्त्व नहीं है। परन्तु इस कारोबार में लगे व्यक्ति इसका भी उपयोग करते हैं। यह वही रक्त होता है जिसका प्रयोग हमारे लिए प्रोटीन और दवाईयां बनाने में किया जाता है। इस रक्त को खाद्य-प्रसंस्करण उद्योग से लेकर पशु आहार, ग्लू तथा खाद आदि बनाने में भी प्रयोग किया जाता है।

बूचड़खानों में इतनी क्रूरता के बाद भी हिंसा का यह सिलसिला थमता नहीं है। पशुओं के पेट की गैस निकालने के लिए उनके पेट में स्टील की एक-एक रॉड घोंप दी जाती है। इसके पश्चात् जीवित जानवरों की खाल भी उतार ली जाती है। उनकी खाल उतारते समय भी स्टील की रॉड उनके पेट में ही रहती है और लगभग डेढ़ घंटे तड़फने के बाद जब पशु मर जाता है तब यह रॉड निकाली जाती है। हालांकि भारत में पशुओं के विरूद्ध क्रूरता का कानून मौजूद है, परन्तु जब यहां इतनी क्रूरता से पशुओं का वध किया जाता है तो इसे अपराध क्यों नहीं माना जाता है?

गाय, भैंस, बैल, ऊंट, भेड़ और बकरी जैसे पशु लाखों वर्षों से हमारी संस्कृति एवं पर्यावरण के अभिन्न अंग होने के साथ-साथ हमारी उन्नति में भी बराबर के सहयोगी रहे हैं। मनुष्य को पशुओं से हजारों करोड़ रुपये का दूध, खाद, कार्य ऊर्जा और अन्य विविध उपयोग की सामग्री मिलती है। भारत की आर्थिक स्थिति को तो यहां के पशुओं ने बहुत प्रभावित किया है। देश के सकल घरेलू उत्पाद में पशुओं का योगदान लगभग 7 प्रतिशत है जबकि कृषि क्षेत्र के सकल घरेलू उत्पाद में इनकी भागीदारी 31.7 प्रतिशत तक की है। भारत के ग्रामीण क्षेत्र की दो तिहाई महिलाएं तो सीधे तौर पर पशुपालन के धंधे से जुड़ी हुई हैं। यहां की खेती और पशुपालन तो एक दूसरे के पूरक ही हैं। देश के उत्तर-पूर्वी राज्यों में पशुओं को दूध, घी, खेती के काम तथा गोबर के खाद के लिए पाला जाता है जबकि कुछ राज्यों में लोग इन्हें मांस के लिए भी पालते हैं। एक अनुमान के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष पशुओं से 54.4 लाख टन मांस प्राप्त किया जाता है जिसका मूल्य 40 हजार करोड़ रुपये से भी ज्यादा का है। पशुओं से हमें 15 हजार करोड़ रुपये का चमड़ा और अरबों रुपये का दूध, कार्य ऊर्जा और गोबर जैसी सामग्री मिलती है। जाहिर है, पशुधन हमारी राष्ट्रीय आय बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। परन्तु इतने सहयोग के बावजूद भी देश में न केवल पशुओं की उपेक्षा की जाती है बल्कि उन पर बर्बरतापूर्वक अत्याचार भी किये जा रहे हैं।

हमारे देश में यह एक आम धारणा है कि ज्यादातर भारतीय शाकाहारी हैं जबकि वास्तव में यहां 55 प्रतिशत से भी ज्यादा लोग नियमित मांस खाते हैं और 20 प्रतिशत यदाकदा उसका स्वाद चखते हैं। हैरानी की बात है कि पश्चिमी देशों के लोग जो पूर्णतः मांसाहारी थे अब शाकाहार की ओर अग्रसर हैं। इसके विपरीत भारत में उच्च, मध्यम वर्ग, उद्योगपति और तथाकथित प्रगतिशील लोग मांसाहारी बन रहे हैं। मांस खाना यहां आधुनिकता की निशानी समझी जाती है। इस प्रवृत्ति को देखकर लगता है कि भविष्य में भारत में मांसाहारी लोगों की तादाद बढ़ने की बहुत ज्यादा संभावना है। परन्तु भारत का मांस उद्योग आजादी के 63 वर्षों के बाद भी असंगठित क्षेत्र में ही केन्द्रित है। यहां 75 प्रतिशत मांस एवं गोश्त का व्यापार सदियों पुराने तरीके से ही चलाया जा रहा है। देश के अधिकांश बूचड़खानों की व्यवस्था बहुत ही ज्यादा खराब है। इन बूचड़खानों में गंदगी का साम्राज्य है और वहां काम करने वाले कर्मचारी भी न तो शिक्षित हैं और न उन्हें किसी तरह का प्रशिक्षण ही दिया जाता है। लिहाजा वहां से

निकला हुआ उत्पाद स्वास्थ्य की दृष्टि से मानव प्रयोग के लिए ठीक भी होता है।

बूचड़खानों को चलाने के लिए उन पर स्थानीय स्व-शासन के नियम व कानून लागू होते हैं। परन्तु नगर-निगमों व नगर पालिकाओं ने कभी भी बूचड़खानों की स्थिति सुधारने, पशुओं का वध करने की आधुनिक विकसित तकनीक लागू करने और अन्य सुधारात्मक कदम उठाने की कोई कोशिश नहीं की। यहां तक कि अधिकांश नगरपरिषदों में बूचड़खानों से हुई आमदनी को नगर की दूसरी सेवाओं पर ही खर्च कर दिया जाता है। देश के बड़े-बड़े शहरों की नगर-परिषदों या नगर-निगमों को तो कत्लगाहों से करोड़ों रुपये की फीस मिलती है, परन्तु वहां इस आमदनी का एक प्रतिशत हिस्सा भी इस उद्योग की भलाई के लिए खर्च नहीं किया जाता है। इस उद्योग की स्थिति इतनी खराब है कि यहां पशु-चिकित्सक को भी मात्र 35 रुपये महीने की दर से भत्ता दिया जाता है जो कि नाकाफी तो है ही बल्कि इससे चिकित्सक की भावनाएं भी आहत होती हैं।

नगरपरिषदों की लापरवाही के चलते ज्यादातर बूचड़खानों की स्थिति बहुत ही खराब है। वहां हवा, पानी, रोशनी और सफाई की भारी कमी होती ही है, मलमूत्र निकासी तक का वहां समुचित प्रबंध भी नहीं होता है। ज्यादातर बूचड़खानों की चारदीवारी व छतें भी खस्ता हाल में है। वहां जिबह किये जाने वाले जानवरों का वध करने से पूर्व न तो स्वास्थ्य-परीक्षण होता है और न ही बाद में उनका पोस्टमार्टम ही होता है। लिहाजा रोगग्रस्त, नाकारा और विषाणुयुक्त पशु भी वहां बिना किसी जांच के ही काट दिए जाते हैं। इस लापरवाही का खामियाज़ा मांसाहारी उपभोक्ताओं, बूचड़खाने व उद्योग में लगे कर्मचारियों और आस-पड़ौस के नागरिकों को भुगतना पड़ता है। अवैध बूचड़खानों में तो स्थिति और भी ज्यादा भयावह है। वहां पशुओं को मारने से पहले तथा उनके वध के बाद किसी भी प्रकार का निरीक्षण या पोस्टमार्टम कभी भी नहीं किया जाता है। वास्तव में अवैध बूचड़खाने चलाए ही इसलिए जाते हैं ताकि स्वास्थ्य संबंधी परीक्षणों से बचा जा सके। मरे हुए या उन रोगग्रस्त पशुओं जिनका मांस खाने योग्य नहीं होता है, को अवैध बूचड़खानों के गंदे फर्श पर की काट दिया जाता है। एक अनुमान के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष 16 करोड़ पशु और 25 करोड़ पक्षियों को ऐसे ही लाखों अवैध बूचड़खानों में काटा जा रहा है। 'अल-कबीर' और मुम्बई स्थित 'देवनार' जैसे बड़े-बड़े बूचड़खानों को प्रत्येक वर्ष लाखों पशुओं को काटने का लाईसेंस प्राप्त है। कोलकाता के बूचड़खानों में भी लाखों गायें व भैंसें काटी जाती हैं। इन बूचड़खानों में कटने वाले पशुओं का विवरण तो संभवतः मिल भी जाए परन्तु देश भर में छोटे-छोटे हजारों बूचड़खानों में कितने पशु मारे जा रहे हैं, उनका तो कोई आंकड़ा भी उपलब्ध नहीं है।

अवैध बूचड़खाने न केवल 90 करोड़ मांसाहारी लोगों के स्वास्थ्य के लिए खतरा हैं बल्कि उनके आस-पास बसे 20 करोड़ नागरिकों के पर्यावरण को भी वे खतरा पैदा कर रहे हैं। ये बूचड़खाने जहां स्थित हैं वहां का वायुमण्डल भी दूषित रहता है। आकाश में चील, गिद्ध और कौओं के मंडराने से वहां का हवाई मार्ग अर्थात् वायु परिवहन भी प्रभावित होता है जबकि इन से निकले अपशिष्ट से भूजल, नदियों व झीलों का पानी तक प्रदूषित हो रहा है।

देश में गोश्त की बढ़ती मांग को देखते हुए लगता है कि इस उद्योग के बढ़ने की काफी गुंजाइश है। पर्यटन और फास्टफूड संस्कृति ने भी इस उद्योग में वृद्धि की है। इस उद्योग में लगे लोगों का मानना है कि न तो इसका आधुनिकीकरण किया गया है और न ही इसे अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप ढाला गया है। उनका यह भी कहना है कि इस उद्योग की उन्नति के लिए इसमें कम से कम 20,000 करोड़ रुपये की सालाना पूंजी निवेश करने की आवश्यकता है। दुर्भाग्य से मांस का कारोबार असंगठित क्षेत्र के हाथों में है। इस क्षेत्र में वे लोग कार्यरत हैं जो पैतृक तौर पर इस धंधे से जुड़े हुए हैं।

सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े इस वर्ग का पांच वर्ष का बच्चा भी अपने पैतृक धंधे से जुड़ जाता है। इन लोगों के अनपढ़ या कम पढ़े लिखे होने के कारण उन्हें इस व्यवसाय की महत्ता और बूचड़खानों के रख-रखाव का बिल्कुल भी ज्ञान नहीं होता है। सरकार की ओर से भी उनका जीवन-स्तर सुधारने, उन्हें व्यावसायिक तौर पर प्रशिक्षण देने एवं शिक्षित करने का आज तक कोई सार्थक प्रयास नहीं किया गया है।

इस उद्योग का सबसे दुःखद पहलू यह है कि मांसाहारी उपभोक्ताओं में अपने आहार अर्थात् मांस के प्रति जागृति नहीं है। संगठित क्षेत्र में जितने भी बूचड़खाने हैं वे नगरपालिकाओं एवं नगर-निगमों के अधीन हैं। वहां उन्हें सबसे कम वरीयता प्राप्त आम सेवा की भांति लिया जाता है जबकि अवैध बूचड़खाने तो जन-स्वास्थ्य और उपभोक्ता दोनों के ही हितों के विरूद्ध काम कर रहे हैं। वे प्रदूषण फैला कर वातावरण को भी दूषित करते हैं। अवैध बूचड़खानों के कारण देश के बहुत से लोगों की धार्मिक भावनाएं भी आहत होती हैं। इन कत्लगाहों का ढर्रा आदिकालीन तथा पिछड़ा हुआ है। यहां पशुओं पर बर्बरतापूर्वक अत्याचार करके उनका वध किया जाता है। पशु की गर्दन की मुख्य नाड़ी 'जुगलर' काट कर उसे तड़पने के लिए छोड़ दिया जाता है। वध करने की इस विधि को 'हलाल' करना कहा जाता है। छोटे शहरों व गांवों में तो बूचड़खानों के फर्श भी गंदे होते हैं। वहां प्रायः संक्रमण फैला रहता है। अतः या तो सरकार को ऐसे बूचड़खानें बंद कर देने चाहिए, नहीं तो ऐसे बूचड़खानों के रख-रखाव के लिए निर्धारित नियमों के अनुसार उन्हें नगर एवं आवासीय क्षेत्रों से बाहर ऐसे स्थानों पर शिफ्ट कर देना चाहिए जहां पर्याप्त जगह हो और उनका रख रखाव वैज्ञानिक ढंग से हो सके।

जन-स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए बूचड़खानों में पशुओं को बांधने के बाड़े से लेकर उन्हें जिबह करने के स्थान तक की सफाई रखी जानी चाहिए। उनका फर्श साफ व अच्छा होना चाहिए और वहां पर पानी, हवा एवं प्रकाश का पर्याप्त प्रबन्ध होना चाहिए। पशुओं का वध करने की क्रिया में बचे हुए अवशेषों की निकासी एवं अन्य तरह के प्रदूषण के नियंत्रण का भी वहां समुचित प्रबंध होना चाहिए। यदि पशु को जिबह करने वाला कर्मचारी पूरी तरह से प्रशिक्षित न हो तो उसे प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। सबसे बढ़कर कत्ल करने से पूर्व पशु की डॉक्टरी जांच व बाद में उनका पोस्टमार्टम करना आवश्यक होता है ताकि रोगग्रस्त या विषाणुयुक्त पशु का मांस मांसाहारी उपभोक्ता तक न पहुंच सके।

पश्चिमी देशों में तो मांस के लिए ही अधिक पशु पाले जाते हैं जबकि भारत में गाय, भैंस आदि पशु दूध के लिए, भेड़-बकरियां ऊन के लिए तथा बैल व ऊंट आदि पशु खेती के काम के लिए पाले जाते हैं। यहां पर प्रायः जब एक दुधारू पशु का दूध सूख जाता है या उसकी काम करने की क्षमता समाप्त हो जाती है तो उसे बूचड़खाने में भेज दिया जाता है। नियमानुसार जिन पशुओं का वध मांस के लिए किया जाना होता है, उनकी भी उचित देखभाल होनी चाहिए। उन्हें संक्रामक एवं दूसरी बीमारियों से भी बचाया जाना चाहिए। मांस वाले पशुओं का पालन-पोषण भी वैज्ञानिक ढंग से होना चाहिए। उनके लिए हरे चारे एवं पौष्टिक आहार का प्रबन्ध करना भी जरूरी है। पशुओं को नियमित रूप से हरा चारा मिलता रहे इसके लिए 'फोडर बैंक' और 'एग्रो इंडस्ट्री' को बढ़ावा दिया जा सकता है। पशुओं की जानलेवा व संक्रामक बीमारियों पर भी योजनाबद्ध तरीके से काबू पाया जाना चाहिए। उल्लेखनीय है कि पशुओं के मुंह, खुर, तपेदिक, निमोनिया, रिंडरपेस्ट और कई अन्य संक्रामक रोगों के हो जाने से उनका मांस उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य को खराब ही नहीं करता बल्कि वह जानलेवा भी हो सकता है।

पशुओं की आंतों में खतरनाक 'ई-कोली' जैसे 'पैथोजिन' होते हैं जिन्हें यद्यपि मांस से दूर रखा जाता है परन्तु जहां काम शीघ्रता से निपटाना होता है तो मांस में ई-

कोली के रह जाने की आशंका रहती ही है। बचूड़खाने में ऐसी गलतियां होना स्वाभाविक भी है। यूरोपियन देशों में खाद्य नियम बहुत कठोर बनाए गए हैं। इसीलिए वहां भेजे जाने वाले मांस को निर्यातक देश बड़ी सावधानी से भेजते हैं। यहां तक कि जब इन देशों के लिए मीट की पैकिंग की जाती है तो 'कनवेयर लाईनों' को धीमा कर दिया जाता है ताकि मांस की जांच-परख अच्छी तरह से की जा सके। फिर भी यदा कदा वहां भी संक्रमित मांस चला जाता है।

विश्व में सर्वाधिक पशुओं वाला देश होकर भी भारत अपने बीमार पशुओं के कारण मांस के निर्यात में पिछड़ा हुआ है। मांस के उत्पादन और गुणवत्ता के लिहाज से भारत की स्थिति विश्व में सबसे निम्न स्तर पर है। यहां पशुओं के स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रमों को सुदृढ़ करने एवं उन्हें लागू करने की नितांत जरूरत है। वध के लिए पशुओं के पैदल ले जाने पर हालांकि भारत में पाबंदी है लेकिन फिर भी देश में लगभग 16 करोड़ पशु प्रत्येक वर्ष अपनी अंतिम यात्रा पैदल या दमघोंटू वाहनों में ही तय करते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि इनकी आवाज उठाने एवं उनके अधिकारों की मांग उठाने वालों की देश में भारी कमी है। यदि पशुओं के पास वोट बैंक होता तो देश के तमाम राजनेता उनके कल्याण की बात करते नजर आते। परन्तु पशुओं का कोई वोट बैंक नहीं है, इसीलिए उन पर अत्याचार हो रहा है। पशुओं के कल्याण के लिए अव्वल तो उनके वध पर रोक लगाई जानी चाहिए। यदि यह संभव न हो तो अवैध बूचड़खानों को रोकने के लिए भी सरकार को सख्त कानून बनाने चाहिए। राज्य स्तर पर मीट कॉरपोरेशनों का गठन होना चाहिए ताकि इस उद्योग के आधुनिकीकरण करने का मार्ग प्रशस्त हो सके। उद्योग में सुधारात्मक कदम उठाने के लिए एक केन्द्रीय संस्था का गठन भी जरूरी है। उक्त संस्था नीति निर्धारण से लेकर मांस उद्योग को संसाधन, तकनीकी ज्ञान एवं अन्य आवश्यक सूचनाएं उपलब्ध करवाने वाली प्रमुख संस्था हो सकती है।

जानकारों का कहना है कि मांस उद्योग में मौजूद विसंगतियों, कुप्रबंध एवं आधुनिक तकनीकी ज्ञान के अभाव में देश को एक लाख करोड़ रुपये सालाना का नुकसान हो रहा है। यदि इस उद्योग में 5 वर्षों में 65,000 करोड़ रुपये की पूंजी निवेश करके सुधारात्मक कदम उठाए जाएं तो प्रत्येक वर्ष इतनी ही अतिरिक्त आय होनी आरम्भ हो जाएगी। उनका मत है कि मांस उद्योग को गति देने के लिए सरकार को इसे प्राथमिकता वाले उद्योग का दर्जा देना चाहिए। ग्रामीण लोगों से जुड़े होने के कारण इसे ग्रामीण उद्योग भी घोषित किया जा सकता है। दूसरी ओर, नगर-पालिकाओं एवं नगर-निगमों को अपने बूचड़खानों में जिबह करने की फीस बढ़ा देनी चाहिए और उस धन का प्रयोग पशुओं के कल्याण तथा बूचड़खानों के विकास पर किया जाना चाहिए।

मांस देने वाले पशु भी हमारे पशुचक्र का ही अंग हैं। वे हमारी कुल राष्ट्रीय आय में फिलहाल एक लाख करोड़ रुपये से ज्यादा का योगदान कर रहे हैं। मानव सभ्यता के विकास के साथ जब से आदमी ने जानवरों को पालतू बनाया, तब से वे मनुष्य का न केवल जीवित रहते साथ देते हैं बल्कि मरणोपरांत भी अपने मांस, खाल, सींग, हड्डियों, रक्त और बालों आदि से उसका भला करते हैं। फिर भी यदि हम पशुधन की उपेक्षा करें तो उनके प्रति यह कितनी नाइंसाफी और कृतघ्नता है। यदि हमें इस अपराध से बचना है तो उन बूचड़खानों को बंद करने में ही भलाई है जहां पशुओं पर बर्बर अत्याचार होते हैं और जहां तमाम आचार संहिताएं ताक पर रखी जाती हैं

Save Environment

BHAJNA HOME DECOR PRIVATE LIMITED

Mfg & Exporters of All kinds of Floor Covering & Home Furnishing Product

Branch (Packing & Finishing)

Plot No. 71, Sector 29, Part II, HUDA, Panipat - 132103

Mobile: 92158 18777

Email: info@bhajna.net | Web: www.bhajna.net

गगनदीप भारद्धाज

प्रदूषण घटाने और सड़क-सुरक्षा में टायरों की भूमिका है लाजबाब

सड़कों पर बेहतर सुरक्षा के लिए अच्छी तरह से रख-रखाव किए गए टायरों की भूमिका अविस्मरणीय होती है। इस का कारण यह है कि वाहनों के गतिमान होने पर अंतत: टायर ही सड़क के साथ संपर्क में रहते हैं। यद्यपि, टायर एक उच्च इंजीनियरिंग उत्पाद है जिसे लोगों की यात्रा को सुरक्षित बनाने के लिए डिजाइन किया गया है, फिर भी इन को नियमित रखरखाव की जरूरत होती है। परन्तु, सच्चाई तो यह भी है कि टायरों के प्रति बहुत अधिक संवेदनशील रहने की अपेक्षा अनेक लोगों का रवैया अब भी टायरों के प्रति नकारात्मक सा ही है। लोग टायरों को बहुत हल्के में लेते हैं जिसका नतीजा यह होता है कि ऐसे लोगों को सफ़र के दौरान बहुत बार बड़ी परेशानी का सामना करना पड़ जाता है। पिछले कुछ वर्षों में टायर प्रौद्योगिकी ने एक बड़ी छलांग लगाई है और इनमें सुरक्षा के कुछ नए फीचर भी शामिल किए गए हैं। यदि वाहनधारक समय–समय पर टायरों का नियमित निरीक्षण, इनमें हवा के दबाव, पहियों की अलाइनमेंट आदि छोटे-छोटे एहतियाती उपायों को करवातें रहें, तो उनके वाहनों के टायर सुरक्षित यात्रा सुनिश्चित करने के अलावा एक लम्बी दूरी तय कर सकतें हैं। सही प्रकार की ड्राइविंग स्टाइल जैसे किफायती ड्राइविंग शैली जैसे अचानक ब्रेक लगाने और त्वरण को बचा कर एक ड्राईवर अपने वाहन की १० से २० प्रतिशत तक ईंधन की खपत की बचत करने के अतिरिक्त पर्यावरणीय प्रभाव को कम कर सकता है।

अॅटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन ने पिछले दिनों इन्फोसिस के साथ मिलकर टायरों के रखरखाव पर एक जागरूकता अभियान का आयोजन किया जिस के माध्यम से सड़क यात्रा को सुरक्षित बनाने की एक आवश्यक पहल की गई। इस कार्यशाला में टायरों के अच्छी तरह से रख-रखाव के बारे में जानकारी देते हुए बताया कि टायरों की अच्छी तरह से रख-रखाव से कुशलता से ब्रेक लगाने, गाड़ी को सुगमता से चलाने एवं सवारी करने में सहजता जैसे कई फायदे होने के साथ ईंधन की बचत होने जैसे लाभ तो शामिल हैं ही, नियमित रखरखाव से टायरों की उम्र भी लम्बी होती है। जबकि, एक कटा-फटा हुआ टायर सड़क यात्रा के दौरान सुरक्षा के लिए बहुत बड़ा खतरा होता है। अत: टायरों की देखभाल और उनकी सुरक्षा आज एक बहुत जरूरी विषय है। मौजूदा समय में अॅटोमोबाइल उद्योग ने बहुत उन्नति की है और हमारी सड़कें एवं राजमार्ग भी सुद्रढ़ होने के साथ-साथ उनमें वृद्धि भी हुई है, लिहाजा राजमार्गों पर वाहनों की गति भी बहुत तेज हो गई है। परन्तु, दुर्भाग्य से टायरों के रख-रखाव के प्रति लोगों की मानसिकता अब तक पूर्ण रूप से नहीं बदली है।

वाहनों के टायरों के बेहतर रख-रखाव से सड़कों पर बड़ी भारी संख्या में होने वाली दुर्घटनाओं को रोका जा सकता है । ज्ञात हो, एक टायर अपने बोझ से 50 गुणा से अधिक भार को भी ढो सकता है। हालांकि, एक टायर

का सड़क के साथ संपर्क सिर्फ एक पोस्टकार्ड के आकार जितना ही होता है। परन्तु, टायरों के बेहतर रख-रखाव से वाहनों की सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सकता है क्योंकि,सुरक्षा का एक बड़ा हिस्सा टायरों ही पर निर्भर करता है। यदि टायर कहीं से भी फूलें हुए हैं या उनमें कहीं पर कोई कट लगा हो तो दुर्घटना होने की संभावना अधिक होती है, क्योंकि सड़क पर ऐसे टायरों की पकड़ नहीं रह पाती है। परन्तु, अधिकांश लोगों को टायरों की न तो पहले कभी कोई परवाह थी और न ही उन्हें अब भी कोई ज्यादा परवाह है। वस्तुत: उन्हें तो कट लगे हुए अथवा जीर्ण टायरों की वजह से होने वाले खतरों की जानकारी ही नहीं है। कटे-फटे और जीर्ण टायरों की वजह से तो कारों और अन्य गाड़ियों के सश्स्पेंसन सिस्टम भी प्रभावित होतें हैं। लोगों में जब टायरों से संबधित पूर्ण जागरूकता आ जाएगी तो उम्मीद की जा सकती है कि लोग और अधिक सुरक्षित रूप एवं आराम से अपने वाहनों की सवारी कर सकते हैं।

एक कार अथवा किसी भी वाहन के मालिक के रूप में आपको कहीं भी जाने से पहले अपने वाहन के तेल-पानी के साथ-साथ उसके टायरों की भी अच्छी तरह से जांच करानी चाहिए। यदि आप टायरों में कुछ ग़ैरमामूली सा भी परिवर्तन देखते हैं, तो आपको उनकी तुरंत जांच कराने और ठीक करने की जरुरत है। कार चलाने के लिए आपका एक विशेषज्ञ मैकेनिक होना जरूरी नहीं है, परन्तु आपको टायरों से सम्बंधित मूल बातों के विषय में में सब कुछ पता होना चाहिए। ज्ञात हो, टायर बेकार होने से बहुत पहले ही अपना आधार खो देते हैं। परीक्षण बताते हैं कि टायर के ऊपरी हिस्से के आधा घिसने तक, सड़क पर इसकी बहुत सी महत्वपूर्ण पकड़ समाप्त हो जाती है । यही कारण है कि आपको जब यह पता लगता है कि कितने घिसे हुए टायर सड़कों पर हैं तो आप ही नहीं, सबके लिए ही विशेष रूप से सड़क सुरक्षा को लेकर एक भारी चिंता की बात है प्रतीत होती है । 'राष्ट्रीय राजमार्ग यातायात सुरक्षा प्रशासन' के एक ताजा अध्ययन के अनुसार कारों, पिकअप ट्रकों, वैन, स्पोर्ट्स यूटिलिटी व्हीकल्ज में से लगभग 50 प्रतिशत वाहनों के टायरों में से कम से कम एक टायर आधा घिसा हुआ होता है जबकि,१० प्रतिशत वाहनों के टायरों में से एक पूर्णत: गंजा टायर ही होता है। घिसा हुआ टायर, विशेष रूप से जो पूर्णत: गंजा हो चुका टायर होता है वह गीली सड़कों पर बहुत ही घातक साबित हो सकता है। टायरों के खांचे इतने गहरे नहीं होतें हैं कि पानी खांचों के चैनल के नीचे से बाहर नहीं निकल पाता है। परिणामस्वरुप, टायर पानी की सतह पर फिसल जाते हैं और सड़क की गीली सतह पर अनियंत्रित होकर स्टीयरिंग व्हील को भी प्रतिक्रिया नहीं देतें हैं। ज्यों-ज्यों गाड़ी के टायर घिसतें हैं, गीले मौसम में सडकों पर उनके ब्रेक लगाने और बर्फ आदि पर ट्रैक्शन कम होती जाती है।

किसी फूले हुए अथवा उभार वाले और कट

लगे हुए टायर के साथ ड्राइविंग करना बहुत ही खतरनाक हो सकता है। उपरोक्त में से एक भी कारण होने पर टायर के आंतरिक हिस्से प्रभावित हो सकते हैं जिससे टायर धमाके के साथ फट सकते हैं। टायर में अचानक हुए धमाके के कारण आप गाड़ी पर से नियंत्रण खो सकते हैं और ऐसी लापरवाही एक गंभीर दुर्घटना का कारण बन सकता है। एक ड्राइवर के रूप में, आपकी यह जिम्मेदारी है कि आप यह सुनिश्चित करें कि आपका वाहन हमेशा यात्रा करने के योग्य हो। उसके टायर भी ठीक हों, और यदि ऐसा नहीं है तो यह कानूनी विशिष्टताओं के अनुकूल भी नहीं है। वस्तुत: आपको साल में सिर्फ एक बार अपनी कार का वार्षिक निरीक्षण कराने के लिए उसको गेराज में लाने से भी कुछ और अधिक करने की ज़रूरत होती है। आपको यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आपका वाहन सिर्फ सभी पहलुओं पर न केवल सुरक्षित, सही और अच्छा प्रदर्शन करता है, बल्कि टायरों के मामले में भी आप को कानून की सीमा के भीतर रहना चाहिए। किसी सड़क-दुर्घटना जैसे हादसे से बचने के अलावा गलत ड्राइविंग की वजह से आप पर जुर्माना आयत होने या यहां तक कि अपने बीमा को खोने से बचने के साथ-साथ आपको यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि आप की कार के टायर भी ऐसे हों जैसा कि इन्हें कानूनन होना चाहिए।

आपके टायर के ट्रेड (टायर का वह भाग जो सड़क को स्पर्श करता है) की कानूनी न्यूनतम गहराई टायर की पूरी परिधि के चारों ओर के ट्रेड के ७५ प्रतिशत हिस्से की गहराई कम से कम १.६ मिमी होने की जरूरत होती है ताकि सड़क पर टायर सुरक्षित तरीके से चल सके।

ड्राईवर की यह जिम्मेदारी है कि वह अपनी कार के टायरों में हवा का उचित दबाव बनाए रखें। प्रत्येक वाहन के टायरों के लिए हवा का एक विशिष्ट टायर दबाव मुकर्रर होता है, जिसके बारे में आप अपने वाहन के मैनुअल से अथवा ड्राइवर की ओर के दरवाजे के अंदर लगे एक स्टीकर पर लिखी पोस्ट या अपने ईंधन के ढक्कन के फ्लैप पर लिखी हुई जानकारी से प्राप्त कर सकते हैं । कानूनन आपके वाहन के टायर एक ही एक्सल पर एक ही प्रोफ़ाइल ऊंचाई के, निर्माण और बुनियादी आकार के होने चाहिए। आपकी कार के टायर हर समय पूर्णत: सड़क पर चलाये जाने योग्य हालत में होना चाहिए, जिसका अर्थ यह है कि ये टायर किसी भी तरह के कूबड़, गांठ, उभार या कटे-फटे जैसी बातों से मुक्त हों और उनके अंदर के किसी भी हिस्से की डोर या रस्सी उघड़ी हुई नहीं होनी चाहिए तथा उन पर किसी भी तरह का २५ एमएम अथवा उससे गहरा चीरा नहीं होना चाहिए ताकि टायर की प्लाई दिखती नहीं हो।

इस समय कारों में स्पेयर टायर की प्रतिबध्ता से समन्धित कोई कानून नहीं है। वास्तव में, नए वाहनों में से कईयों में एक स्पेयर टायर का प्रावधान ही नहीं है और न ही वे किसी स्पेयर टायर से सुसज्जित मिलते हैं। अब कोई कानून यह नहीं कहता है कि आप को अपनी

नई कार में किसी एक स्पेयर टायर की जरूरत है। यदि फिर भी आप एक स्पेयर टायर रखना चाहते हैं तो याद रहे, वह हर हालत में सड़क पर पूर्णत: यात्रा के योग्य हो और आप को यह सुनिश्चित करने की जरूरत है कि यदि इसका उपयोग करने की आवश्यकता है तो यह ऊपर वर्णित टायरों से संबंधित सभी कानूनों और किसी भी अन्य टायर की शर्तों पूरा करता हो। हल्के वाणिज्यिक वाहन के लिए टायर प्रेशर मॉनिटरिंग सिस्टम वाहन में लगे हों तो यह वाहन के ड्राईवर को टायर के फुलाव एवं दबाव और इसकी भिन्नता की सूचना देता है, जिससे चालक को अग्रिम जानकारी मिलती है और सड़क पर सुरक्षा बढ़ती है। ट्यूबलेस टायर में टायर पंचर टायर रिपेयर मरम्मत किट को नए नियमों में जरुरी किया गया है। अगर टायर मरम्मत किट और टीपीएमएस प्रदान किए गए हैं तो ऐसे वाहनों में अतिरिक्त टायरों की आवश्यकता भी दूर की गई है।

ट्यूबलेस टायर सन 1950 के दशक में कई देशों में प्रयोग में आ चुके थे, जबकि भारत में 1990 के दशक के अंत तक भी इनको नहीं अपनाया गया था। नवीनतम तकनीक होने के नाते हमारे पड़ोसी देश भी पिछले एक दशक से इन का प्रयोग कर रहे हैं। आमतौर पर यह स्वीकार किया जाता है कि ट्यूबलेस टायर ट्यूब टायर से बेहतर हैं, और इससे भी महत्वपूर्ण बात है कि ये सुरक्षित हैं। इन की वजह से ईंधन की कम खपत होती है और पंचर होने की सूरत में भी वाहन लगभग 100 कि.मी. तक चलने में सक्षम है। लेकिन आज भी ट्यूबलेस टायर की बिक्री कुल यात्री वाहन टायर बिक्री के लगभग १० प्रतिशत ही है। कार निर्माता सभी मॉडलों में ट्यूबलेस टायर नहीं देते हैं और इस के कारणों में वे पर्याप्त मरम्मत बुनियादी ढांचे और सड़क के बुनियादी ढांचे की अनुपस्थिति का हवाला देते हैं। चूंकि कारों के प्रीमियम मॉडल ज्यादातर शहरों में ही बिकते हैं, इसलिए ऐसे टायरों की मरम्मत की पर्याप्त सुविधाएं भी वहीँ उपलब्ध हैं। अर्ध-शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए ऐसा नहीं कहा जा सकता है। सबसे बढ़ कर ट्यूबलेस टायरों के लिए मजबूत मिश्र धातु पहियों को माउंट किया जाता है जिस से वाहन की लागत बढ़ जाती है। भारत की सड़कों पर कई गड्ढों में से चलने पर रिम में डेंट पड़ जाते हैं और कई बार ये गड्ढे
रिम पिचका देते हैं जिससे टायर से हवा का रिसाव हो जाता है। ट्यूबलेस टायर में एक पंचर की मरम्मत के लिए, रिम पर ट्यूबलेस टायर को माउंट या डिमाउंट करने के लिए स्वचालित टायर बदलने वाली मशीनों का उपयोग करना आवश्यक है। हथौड़ा और छेनी के पारंपरिक तरीकों का उपयोग रिम को नुकसान पहुंचा सकता है और हवा के रिसाव का कारण बन सकता है, क्योंकि स्थानीय पंचरवाला उपरोक्त साजो-सामान से सुसज्जित नहीं होता है। इसने एक ऐसी स्थिति पैदा कर दी है जहां लोगों ने ट्यूबलेस टायर के अंदर फिटिंग ट्यूब शुरू कर दी है।

मौसम के हिसाब भी टायरों का वर्गीकरण

पाया जाता है जैसे गर्मियों के लिए अलग टायर और सर्दियों के लिए अलग टायर। गर्मियों के टायरों को अच्छे मौसम के लिए टायर भी कहतें हैं। उन्हें अधिकतम सूखा कर्षण के लिए आमतौर पर की बरसाती मौसम में अधिकतम निष्पादन के लिए बनाया जाता है । उनके ट्रेड यौगिक गर्म तापमान के लिए ऑप्टिमाइज़ होते हैं। इसलिए, यदि आप ठंड के मौसम में गर्मियों के टायरों के साथ ड्राइव करते हैं तो आप देखेंगे कि आप की उम्मीद के विपरीत सर्दियों के टायरों की तुलना में सड़क पर उनकी पकड़ बहुत कम होती है,भले ही सड़कें पूरी तरह से खाली हो। हालांकि, बहुत सी कारें मानक उपकरण के रूप में गर्मियों के टायरों के साथ ही आ रहीं हैं । अक्सर कुछ संशयी लोग सभी मौसम टायरों को "तीन मौसम "या" नो-सीजन" टायर कह कर बुलातें है। सर्दियों के टायरों में गहरी ट्रेड और रबर यौगिकों के कारण उनकी उपयोगिता इस मौसम के लिए ज्यादा होती है ।

टायर एक वृत्त -आकार का एक वाहन का पुरजा है जो ऑटोमोबाइल तथा साईकिल आदि के पहियों के रिम को कवर करता है, उनको बचाता है और वाहन के प्रदर्शन को बेहतर एवं सक्षम बनाता है। ऑटोमोबाइल और साइकिल के टायर वाहन और सड़क के बीच एक कर्षण तो प्रदान करते ही हैं, ये झटकों को भी अवशोषित करके वाहन सवारों को एक लचीले तकिये की तरह आराम प्रदान करते हैं। आधुनिक न्युमेटिक टायर सिंथेटिक रबर, प्राकृतिक रबर, कपड़ा एवं तार, कार्बन ब्लैक और अन्य रासायनिक यौगिकों की सामग्री के साथ मिलाकर बनाये जा रहें हैं।

टायर का एक हिस्सा ट्रेड जबकि दूसरा बॉडी अर्थात शरीर कहलाता है। सड़क की सतह के साथ संपर्क में आकर चलने वाले टायर के हिस्से को टायर का ट्रेड कहते हैं। ट्रेड एक मोटी रबर, कम्पोजिट रबर या रबर के यौगिक वाली मोटी रबर होती है जिसे सड़क पर टायर की पकड़ को एक उचित स्तर प्रदान करने और कम से कम घिसने के लिए ही तैयार किया जाता है। टायर का ट्रेड कर्षण अर्थात पकड़ प्रदान करता है जबकि बॉडी संकुचित हवा की एक मात्रा की रोकथाम करती है। उल्लेखनीय है कि रबर को विकसित करने से पहले टायर का पहला संस्करण बन गया था। उस समय वाहनों को टूट-फुट से बचाने के लिए लकड़ी के पहियों के ऊपर धातु के बैंड चढ़ाये जाते थे। प्रारंभिक रबर के टायर न्युमेटिक नहीं होते थे, परन्तु, आजकल अधिकांश टायर न्युमेटिक अर्थात वायु से भरे हुए होते हैं जिनका एक डोनट के आकार वाला रबर का खोल चढ़ी डोरियों एवं तारों की संरचनाओं वाला शरीर होता है जिसमें भरी हुई संकुचित हवा आम तौर से एक इन्फ्लैटेबल तकिये जैसा आभास देती है। न्युमेटिक टायरों को कारों, साइकिलों, मोटरसाइकिलों, बसों, ट्रकों जैसे कई प्रकार के वाहनों सहित विमानों में इस्तेमाल किया जा रहा है। धातु वाले टायरों का अभी भी

लोकोमोटिव और रेल कारों में उपयोग किया जाता है, जबकि ठोस रबर) या अन्य पॉलीमर से बने (टायरों का विभिन्न गैर-ऑटोमोटिव अनुप्रयोगों में उपयोग किया जाता है जैसे कुछ कॉस्टर, गाड़ियां, लॉनमूवर्ज़, और व्हील्बरोंव्स आदि में।

पहला व्यावहारिक न्यूमेटिक टायर स्कॉटलैंड में जन्मे जॉन बॉयड डनलप द्वारा सन 1888 ई० में बनाया गया था। इस न्यूमेटिक टायर की डिजाइनिंग में उनके एक डॉक्टर साथी सर जॉन फगन ने भी मदद की थी। श्री डनलप ने 31 अक्टूबर, 1888में ही डनलप टायर का पेटेंट साईकिल और हल्के वाहनों में उपयोग के लिए अपने हित में करवा लिया था, परंतु सन 1892ईस्वी में, डनलप के पेटेंट को अवैध घोषित किया गया क्योकि लंदन के थॉमसन स्कॉट रॉबर्ट विलियम द्वारा बनाई गयी एक पूर्व कलाकृति (जिसको भुला दिया गया था) के आधार पर उसने लंदन, फ्रांस और संयुक्त राज्य अमेरिका में बहुत पहले उसका पेटेंट ले रखा था।

वस्तुत: श्री डनलप ने न्यूमेटिक टायर अपने बेटे के तिपहिया साइकिल के लिए विकसित किए थे, परन्तु जल्द ही ये टायर पूरे स्कॉटलैंड में प्रसिद्ध होने से उनका व्यावसायिक कारोबार भी शुरू हो गया था। इन टायरों का उपयोग करके एक स्थानीय साइकिलिस्ट ने वहां आयोजित हुई सभी दौड़ जीत ली थी जिसके चलते वहीं के रहने वाले एक धनी व्यक्ति श्री हार्वे ड्यू क्रोस का ध्यान इन न्यूमेटिक टायरों ने आकर्षित किया। उसने डनलप को साथ में मिलकर काम करने का प्रस्ताव दिया। फलस्वरूप, श्री डनलप ने हार्वे ड्यू क्रोस के साथ मिलकर न्यूमेटिक टायरों का एक नया व्यापार शुरू किया, लेकिन उसने महज कुछ नकदी और थोड़े से शेयरों के लिए अपने ज्यादा शेयर एवं अधिकार ड्यू क्रोस को बेच दिये थे। परन्तु

न्यूमेटिक डनलप रबड़ और डनलप टायर्स बनें रहे। इस प्रौद्योगिकी का विकास असंख्य इंजीनियरिंग प्रयासों के आगे बढ़ाते रहने पर टिका रहा। संयुक्त राज्य अमेरिका में चार्ल्स गुडइयर और ब्रिटेन में थॉमस हंकोच्क द्वारा स्वतंत्र रूप से सन 1844 ई० में प्राकृतिक रबर या रबर जैसी सामग्री में लचीलापन और उसकी शक्ति में सुधार करने के लिए या उन्हें कड़ा करने के लिए बहुत गर्मी में सल्फर के साथ शोधन प्रक्रिया को अलग से पेटेंट कराया गया, जबकि कृत्रिम रबर का सन 1920के दशक में बायर की प्रयोगशालाओं में आविष्कार किया गया।

सन १ 946ई० में, मिशेलिन ने टायर निर्माण के लिए रेडियल टायर विधि विकसित की। मिशेलिन ने सन १९३४ ईस्वी में दिवालिया ऑटोमोबाइल कंपनी सिटरोएन को खरीदा था, इसलिए वह उस नई तकनीक को फिट करने में तुरंत सक्षम था। रेडियल टायर विधि वाहनों की हैंडलिंग और ईंधन की बचत में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर रही थी, लिहाजा यह प्रौद्योगिकी जल्दी ही यूरोप और एशिया भर में फैल गई और टायर निर्माण में इस प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल होने लगा । परन्तु, अमेरिका में सन 1967ईस्वी तक भी तिरछे

और आड़े धागों की परतों वाली प्लाई टायर निर्माण की विधि ही कायम थी और उस समय उस विधि से बने टायरों की बाजार में∧V प्रतिशत की हिस्सेदारी थी। हालांकि, सन 1968ईस्वी में अमेरिकी में भी रेडियल टायरों के निर्माण की श्रेष्ठता को स्वीकार किया गया। अब अमेरिका में, रेडियल टायर की बाजार हिस्सेदारी अब \•• प्रतिशत की है। आज, \ अरब से अधिक टायर ६•• से अधिक टायर कारखानों में सालाना उत्पादन कर रहे हैं।

टायर सुरक्षा पर जागरूकता पैदा करने के लिए अॅटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन ने होंडा कार के साथ हाथ मिला कर टायर में मौजूद ट्रेडे वियर इंडिकेटर पर लोगों को जागरूक करने का प्रयास किया। अॅटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन की तकनीकी शाखा भारतीय टायर तकनीकी सलाहकार समिति ने यह पहल की है। अॅटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन और होंडा कार्स इंडिया ने ट्रेड वियर इंडिकेटर्स की जांच करने की आवश्यकता के बारे में जागरूकता जगाने के लिए हाथ मिलाया था। ट्रेड वियर इंडिकेटर टायर के चलने की डिग्री के दृश्य संकेतक के रूप में होते हैं। देश के राजमार्गों पर ज्यादा चल कर खराब हो चुके टायरों का उपयोग करना लोगों की सुरक्षा के लिए एक खतरे के रूप में सामने आया है। टायरों में ट्रेड वियर इंडिकेटर्स एक आसान सा समझने वाला फीचर है जिसे वाहन चालकों को समय रहते समझ लेना चाहिए क्योंकि इसको एक समयावधि के भीतर टायर को बदलने और दुर्घटनाओं को रोकने में मदद करने के लिए डिज़ाइन किया जाता है। भारतीय टायर तकनीकी सलाहकार समिति के अनुसार टायर में ट्रेड वियर इंडिकेटर्स सबसे व्यापक रूप से स्वीकृत 1.6 मिमी. की न्यूनतम गहराई का मानक है जिस पर पहुँचने अर्थात टायर की 1.6 मि मि. तक घिस जाने पर टायर को सेवा से हटा दिया जाना चाहिए। इस मानक को दुनिया के कई राष्ट्रीय परिवहन प्राधिकरणों द्वारा कानूनी विनियमन के रूप में अपनाया गया है। नए टायरों के ट्रेड की गहराई 8 मिमी है। ट्रेड वियर इंडिकेटर्स टायर की 1.6 मिमी की गहराई, कानूनी तौर न्यूनतम चलने की गहराई के साथ चलने वाले खांचे के भीतर अनुमानित है। अर्थात जब किसी एक टायर का ट्रेड 1.6 मिमी की गहराई तक घिस जाता है तो वह ट्रेड वियर इंडिकेटर्स के संकेतक के स्तर तक पहुंच जाता है और तब टायर को बदलने की जरुरत होती है। टायरों के शोल्डर क्षेत्र पर भी जो निशान होते हैं वे ट्रेड वियर इंडिकेटर्स की ओर इशारा करते हैं। नए टायरों की ट्रेड की गहराई 8 मिमी होती है और ट्रेड वियर इंडिकेटर्स टायर ट्रेड के खांचे के भीतर 1.6 मिमी की गहराई तक कानूनी तौर पर न्यूनतम चलने का प्रक्षेपण हैं। अधिकांश मोटर चालक टायर के ट्रेड के घिसने की डिग्री से काफी हद तक अनजान हैं। इसलिए ख़राब हुए टायरों से होने वाली दुर्घटनाओं

को रोकने के लिए ट्रेड वियर इंडिकेटर्स तक घिसे हुए टायरों के साथ लम्बी दूरी की यात्राओं पर जाने से रोकने की पाबन्दी तय की गई है।

केन्द्रीय सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय के सहयोग से ऑटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन और भारतीय टायर तकनीकी सलाहकार समिति ट्रेड वियर इंडिकेटर के बारे में जागरूकता बढ़ा रहे हैं, ताकि खराब हो चुके टायरों के कारण होने वाले हादसों को कम से कम किया जा सके। ऑटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन के महानिदेशक श्री राजीव बुधराजा ने कहा कि होंडा की इस पहल से इस अभियान को और गति मिलेगी। अपने पहले कदम के रूप में होंडा ने सभी लोगों के साथ-साथ अपने कर्मचारियों के बचाव के लिए ग्रेटर नोएडा में अपने कॉर्पोरेट कार्यालय और निर्माण इकाई में ट्रेड वियर इंडिकेटर पर जागरूकता पैदा करने वाले बड़े-बड़े पोस्टर भी लगाए हैं। ऑटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन ने अखिल भारतीय टायर सुरक्षा कार्यक्रम के लिए इंडियन ऑयल के साथ भी हाथ मिलाया है। ऑटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन पूरे भारत में इंडियन ऑयल के रिटेल आउटलेट्स पर जाने वाले मोटर चालकों के साथ बातचीत करेगा और एक बड़े पैमाने पर जागरूकता अभ्यास के माध्यम से टायर सुरक्षा के बारे में उन्हें जागरूक करेगा। उद्योग निकाय ने एक विज्ञप्ति में कहा भारतीय टायर तकनीकी सलाहकार समिति इस पहल की अगुवाई करेगी।

इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड में टायर सुरक्षा अभियान हाल के दिनों में होंडा कार्स, इन्फोसिस, आईएसआरपीएल और पीपावाव पोर्ट आदि के विभिन्न परिसरों में आयोजित इसी तरह के अभ्यास के मद्देनजर आया है। ऑटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन ने भारत सरकार के सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय के समग्र सड़क सुरक्षा अभ्यास के एक भाग के रूप में टायर सुरक्षा पर ध्यान केंद्रित किया है। ऑटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन के महानिदेशक श्री राजीव बुधराजा ने कहा कि वे ऑटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन और भारतीय टायर तकनीकी सलाहकार समिति द्वारा किए जा रहे इस तरह के एक महत्वपूर्ण सुरक्षा अभियान में भागीदार बनने के लिए इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड की टीम की सराहना करते हैं।

सड़क सुरक्षा के मामले में एक अच्छा ट्रैक रिकॉर्ड न रखने वाले देश के रूप में, युद्धस्तर पर सड़क सुरक्षा अभियान का होना बहुत जरूरी है। ऑटोमोटिव टायर मैन्युफैक्चर्स एसोसिएशन के साथ आने से, भारत में टायर उद्योग और भारत के प्रमुख संगठन इंडियन ऑइल के ऑर्गस्ट बॉडी, देश में होने वाले सड़क सुरक्षा अभियानों के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है। हम जागरूकता में महत्वपूर्ण सुधार के लिए तत्पर हैं, विशेष रूप से टायर सुरक्षा के संबंध में।

BHUSHAN'S
555
Kachhi Ghani
Pure Mustard Oil

BHUSHAN'S
JIWAN DHARA
Refined
Cooking Oil

Bhushan Oils & Fats Pvt. Ltd.
10th K.M. Stone, V & P.O., Balana, Hissar Road, Ambala
Ph: +91-98963-35462, 98963-50462
OILS, GHEE, SOAP & MUSTARD CAKE

Save Environment

M/s Allied Blenders & Distillers Pvt Ltd.

Ashford Centre, 3rd and 4th Floor, Shankarrao Naram Marg, Lower Parel (W), Mumbai–400 013

Tel: +91 22 4300 1111, Fax: + 91 22 4300 1116, E-mail: info@abdindia.com